१

आचार्य रजनीश

गीता दर्शन

गीता दर्शन

(१)

आचार्य रजनीशजी

संकलन :
शांतिभाई शाह
विश्वनीड़

"गीता दर्शन" ग्रंथमाला—पुष्प १

प्रकाशक :
जयंतीभाई ठाकर
जीवन जागृति केन्द्र,
खाडिया चार रस्ता,
अहमदाबाद

प्रथम संस्करण :
जनवरी १९७१

आयोजनादान :
भरतभाई मणिलाल दलाल
अहमदाबाद

मूल्य : ३ रुपये

मुद्रक :
माणेकलाल दी. पटेल
धरती मुद्रणालय
रायखड, अहमदाबाद

गीता - गीत

संदेह शुभ है। संदेह श्रद्धा की खोज है। मगर संदेह अंत नहीं है। अर्जुन का मन विषाद से भर गया संदेह अुठता रहा, कृष्ण अुसे समझाते रहें। अर्जुन की 'संदेह साधना' और श्रमने हमें गीता की भेंट दी।

गीता की आलेचना, टीका तो बहुतसे लोगोंने की। मगर अभी नवम्बर मासमें पूरे नव दिन तक अहमदाबाद में आचार्य रजनीशजी ने तो गीता के गीत गायें। यह 'गीता–गीत' को समस्त समाज के सामने रखने के आनंद को कौन रोक सके?

पहले और दूसरे अध्याय पर आचार्यजीने जो गीत गायें अुसे समाज के सामने रखने का संकल्प जीवन जागृति केन्द्र अहमदाबाद ने किया है। "गीता दर्शन" ग्रंथमाला के रूप में ये प्रवचन प्रगट होते रहेंगे। प्रथम प्रवचनों का यह प्रथम पुष्प समाज के सामने रखने के लिये केन्द्र को अभिनंदन दिये बिना नहीं रह सकती।

श्री भाईदासभाई परीख (बालगोविंद कुबेरदास की कंपनी) के परिश्रम और प्रेमपूर्ण सहयोगसे यह पुष्प जलदी और योग्य रूप में प्रगट हो सका। अुनके प्रेमके लिये आभारी हूँ।

आचार्यजीके 'प्रेम' ने तय किया है कि पूरी गीताको समजाना जानती हूँ समाज को अुनकी ये अमूल्य भेंट होगी। कृष्ण के जीवन की झलक जिनमें मिलती है अैसे 'बहु आयामी' आचार्यजी ही कृष्ण को प्रस्तुत करते हैं तो यह हमारा सौभाग्य है।

"वास्तव में प्रेम संबंध होते राग होता है मगर प्रेम स्वभाव हो तो 'वितराग' होता है"।

असा अनुभव जिस के सांनिध्य में होता है वे "प्रेम-स्वरूप आचार्य रजनीशजी 'प्रेम सम्राट' कृष्ण की गीता का गीत गा रहे हैं।

मंत्रमुग्ध होकर गीत ही सूनें......

विश्वनीड,
संस्कार तीर्थ, आजोला
२९-१२-७० मा आनंद मधु

गीता प्रवचन

प्रथमोऽध्यायः

धृतराष्ट्र उवाच

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥१॥

धृतराष्ट्र बोला, हे संजय ! धर्मभूमि कुरुक्षेत्रमें इकट्ठे हुए युद्धकी इच्छावाले मेरे और पाण्डुके पुत्रोंने क्या किया? ॥१॥

धृतराष्ट्र आँखके अंधे थे लेकिन आँखके न होने से वासना नहीं मिट जाती । आँखके न होनेसे कामना नहीं मिट जाती । काश ! सुरदासने धृतराष्ट्रका ख़याल कर लिया होता तो आँखें फोडनेकी कोई जरूरत नहीं होती । सुरदासने आँखें फोड ली थी इसलिए न रहेंगी आंखें, न मनमें उठेगी कामना, न उठेगी वासना पर, आंखोंसे कामना नहीं उठती । कामना उठती है मनसे । आँखें फूट भी जाय फोड भी डाली जाये तो भी वासनाका कोई अंत नहीं है । गीताकी यह अद्भुत कथा एक अंधे आदमीकी जिज्ञासा से शुरू होती है । असलमें इस जगतमें सारी कथाएँ बन्ध हो जाएं अगर अंधा आदमी न हो। इस जीवनकी सारी कथाएँ अंधे आदमीकी जिज्ञासा से शुरू होती है । अंधा आदमी भी देखना चाहता है जो उसे दिखाई नहीं पड़ता है, बहरा भी सुनना चाहता है जो उसे सुनाई नहीं पडता है । सारी इन्द्रियाँ भी खो दें तो भी मनके भीतर छिपी हुई भ्रांतियों का कोई विनाश नहीं होता

तो पहली बात आपसे यह कहना चाहूँगा कि स्मरण रखना कि धृतराष्ट्र अंधा है, लेकिन युद्धके मैदान पर क्या हो रहा है, कई मील दूर बैठे उनका मन उनके लिए उत्सुक, जाननेको पीड़ित जाननेको आतुर है। दूसरी बात यह भी स्मरण रखें कि अंधे धृतराष्ट्रके सौ पुत्र थे लेकिन, अंधे व्यक्तित्वकी संतति आँखवाली नहीं हो सकती। भले ऊपरसे आँखें दिखाई पडती हों, अंधे व्यक्ति से जो जन्म पाता है और शायद अंधे व्यक्तियों से ही लोग जन्म पाते हैं तो भले ऊपरकी आँख हों, भीतरकी आँख पानी कठिन है, यह दूसरी बात भी समझ लेनी जरूरी है। धृतराष्ट्र से जन्मे हुए सौ पुत्र सब तरहसे अंधा व्यवहार कर रहे थे। आँखें उनके पास थीं लेकिन, भीतरकी आँख नहीं थी। अंधे से अंधापन ही पैदा हो सकता है। फिर भी यह पिता क्या हुआ यह जाननेको उत्सक है।

तीसरी बात यह भी ध्यानमें रख लेनी जरुरी है कि धृतराष्ट्र कहते हैं धर्मके इस कुरुक्षेत्रमें युद्धके लिए इकट्ठा होना पडे उस दिन धर्मक्षेत्र, बचता नहीं है और जिस दिन धर्मके क्षेत्रमें भी लड़ना पड़े उस दिन धर्मके भी बचनेकी संभावना समाप्त हो जाती है। रहा होगा वह धर्मक्षेत्र, था नहीं रहा होगा कभी पर, आज तो वहाँ एक दूसरे को काटने को आतुर सब लोग इकट्ठे हुए थे। यह प्रारंभ भी अद्भुत है यह इसलिये भी अद्भुत है कि अधर्मक्षेत्रोंमें क्या होता होगा उसका हिसाब लगाना मुश्किल है। धर्मक्षेत्रमें क्या होता है वह धृतराष्ट्र संजयसे पूछते हैं कि वहाँ युद्धके लिए आतुर मेरे पुत्र और इनके विरोधियोंने क्या किया है, क्या कर रहे हैं वह मैं जानना चाहता हूँ धर्मका क्षेत्र शायद पृथ्वी पर बन नहीं पाया अब तक क्यों कि धर्मक्षेत्र बन ही रहा तो युद्धकी संभावना समाप्त हो जानी चाहिए। युद्धकी संभावना बनी हुई है। और धर्मक्षेत्र भी युद्ध क्षेत्र हो जाता है। तो वह अधर्म को क्या देखते क्या निंदा करे। सच तो यह है

कि अधर्मके क्षेत्रमें शायद, कम युद्ध हुए हैं धर्मके क्षेत्रोंमें ज्यादा युद्ध हुए हैं। और अगर युद्ध और रक्तपात के हिसाबसे ही अगर हम, विचार करने चलें तो धर्मक्षेत्र ज्यादा अधर्मक्षेत्र मालूम पड़ने लगेगा। बजाय अधर्म क्षेत्रोंके ! यह व्यंग भी समज लेने जैसे हैं कि धर्मक्षेत्र पर अबतक युद्ध होता रहा और आज ही होने लगा है। ऐसा भी मत समझ लेना कि आज भी मंदिर और मस्जिद युद्ध के अड्डे बने हुए नहीं है। हजारों साल पहले जब हम कहें कि बहुत भले लोग थे इस पृथ्वी पर और कृष्ण जैसा अद्भुत आदमी मौजूद था तब भी कुरुक्षेत्र थे। धर्मक्षेत्र पर लोग लड़नेको ही इकट्ठे हुए थे। यह मनुष्यकी गहरेमें जो युद्धकी पिपासा है, यह मनुष्यकी गहरेमें विनाशकी जो आकांक्षा है और मनुष्यके गहरेमें जो पशु छिपा है वह धर्मक्षेत्रमें भी छूट नहीं जाता, वहाँ भी युद्धकी तैयारियाँ कर लेता है। इसे स्मरण रखने के लिए उपयोगी है और यह भी कि, जब धर्मकी आडमें धर्मकी आड मिल जाय लड़नेको, तो लड़ना और भी खतरनाक हो जाता है। तब न्याययुक्त भी मालूम होने लगता है। यह अंधे धृतराष्ट्रने जो जिज्ञासा कि हैं उससे यह धर्मग्रंथ शुरू होता है। सभी धर्मग्रंथ अंधे आदमीकी जिज्ञासासे शुरू होते हैं। जिस दिन दुनियामें अंधे आदमी न होंगे उस दिन धर्मग्रन्थकी कोई जरुरत भी नहीं रह जाती है। वह अंधा ही जिज्ञासा कर रहा है।

प्रश्न : आचार्यश्री, धृतराष्ट्रको युद्धका रिपोर्ट निवेदित करनेवाले संजयकी गीतामें क्या भूमिका है ? संजय क्या दूरदृष्टि या दूर श्रवणकी शक्ति रखता था ? संजयकी चित्तशक्तिकी दिग्दर्शन कहाँ तक थी ? वह स्वयंमें भी हो सकती है ?

उत्तर : संजय पर निरन्तर संदेह उठता जा रहा है, स्वाभाविक है। संजय बहुत दूर बैठकर कुरुक्षेत्रमें क्या हो रहा है उसकी खबर धृतराष्ट्र को देता है। योगनिरन्तर से यह मानता रहा है जो

आँखें हमें दिखाई पड़ती हैं वे ही आँखें नहीं और भी आँखें हैं मनुष्यके पास जो समय और क्षेत्रकी सीमाओंको लंघकर देख सकती हैं। लेकिन, योग क्या कहता है। इससे जो कहता है वह सही होगा ऐसा नहीं है। संदेह होता है मनको, इतना दूर संजय कैसे देख पाता है क्या वह सर्वज्ञ है? नहीं, पहली बात तो यह कि दूरदृष्टि कोई बहुत बड़ी शक्ति नहीं है। सर्वज्ञसे उसका कोई संबंध नहीं है। बहुत, छोटी शक्ति है और, कोई भी व्यक्ति चाहे तो थोडे ही श्रमसे अुसे विकसित कर सकता है। और, कभी तो ऐसा भी होता है कि प्रकृति की किसी भूलचूकसे वह शक्ति किसी व्यक्ति को सहज ही विकसित हो जाती है। एक व्यक्ति है अमेरिकामें अभी मौजूद, नाम है "टेड़ सिरिओ" उसके संबंधमें दो बात कहना पसंद करूँगा। क्योंकि संजयको समझना आसान हो जाएगा, क्योंकि संजय बहुत दूर है समयमें हमसे, और न मालूम किसी दुर्भाग्यके क्षणमें हमने अपने समस्त पुराने ग्रन्थोंको कपोलकल्पना समझना शुरू किया है।

संजयको छोडे, अमेरिकामें आज जिंदा आदमी है "टेड़ सिरिओ" जो कि कितने ही हज़ार मील दूरी पर कुछ भी देखनेमें समर्थ। ना केवल देखने में बल्कि उसकी आँख भी उस चित्रको पकड़नेमें भी समर्थ है, हम यहाँ बैठके यह जो चर्चा कर रहे हैं। न्यूयार्कमें बैठे हुए टेड सिरिओ को अगर कहा जाय कि अहमदाबादमें इस मैदान पर क्या हो रहा है तो वह पाँच मिनट आँख बंद कर बैठा रहेगा, आँख खोलेगा और अुसकी आँखमें आप सबकी बैठी हुई तस्वीर अुसकी आँखमें दूसरा देख सकता है और उसकी आँखमें जो तस्वीर बन गयी उसका केमरा, फोटो भी ले सकता है। हज़ारो फोटो लिए गए हैं हज़ारो चित्र लिए गए हैं और टेड़ सिरिओकी आँख कितनी ही दूरी पर किसी भी तरह के चित्रको पकड़नेमें समर्थ है। न केवल देखनेमें बल्कि चित्रको पकड़ने में भी। टेड़ सिरिओ की घटना ने दो बातें साफ कर दीं, एक तो संजय कोई

सर्वज्ञ नहीं है क्योंकि टेड़ सिरिओ बहुत साधारण आदमी है कोई आत्मज्ञानी नहीं है। टेड़ सिरिओ को आत्मा का कोई पता नहीं है। टेड़ सिरिओ की जिंदगीमें साधुता का कोई नाम नहीं है। लेकिन टेड़ सिरिओ के पास एक शक्ति है वह दूर देखने की विशेष शक्ति।

कुछ दिनों पहले स्केन्डरियामें एक व्यक्ति किसी दुर्घटनामें जमीन पर गिर गया। कार से उसके सिरको चोट लग गयी। और, अस्पतालमें जब होशमें आया तो बहुत मुश्किलमें पड़ा, उसके कानमें जैसे कोई गीत गा रहा हो उसे ऐसा सुनाई पड़ने लगा। उसने सोचा शायद मेरा दिमाग खराब तो नहीं हो गया। लेकिन, एक या दो दिनके भीतर सब स्पष्ट साफ होने लगा। और अब तो यह भी साफ हुआ कि दस मीलके भीतर जो रेडयो स्टेशन था उसके कानने उस रेडियो स्टेशनको पकड़ना शुरू कर दिया। जब उसके कानका सारा अध्ययन किया गया तब पता चला कि उसके कानमें कोई विशेषता तो नहीं है लेकिन, चोट लगनेसे कानमें छिपी हुअी कोई शक्ति सजीव हो गयी है। ओप-रेशन करना पड़ा क्योंकि अगर चौबीस घंटे ऑफ आनका तो कोई उपाय न था। अगर उसे कोई स्टेशन सुनाई पडे तो वह आदमी पागल ही हो जाय। पिछले दो वर्ष पहले इंग्लंडमें एक महिलाको दिनमें ही आकाशके तारे दिखाई पड़ने शुरू हो गअे। वह भी अेक दुर्घटनामें ही हुआ। छतसे गिर पड़ी और दिनमें ही आकाशके तारे दिखाई पड़ने शुरू हो गए। तारे तो दिनमें भी आकाशमें होते हैं कहीं चले नहीं जाते सिर्फ सूर्य के प्रकाशके कारण ढंक जाते हैं। रात फिर उभर आते हैं। प्रकाश हट जाने से। लेकिन, आँखें अगर सूर्यके प्रकाशको पार करके देख पाए तो दिनमें भी तारोंको देख सकतीं हैं। उस स्त्रीको भी आँखका ओपरेशन ही करना पड़ा। यह मैं अिसलिए कह रहा हूँ कि आँखमें भी शक्तियाँ छिपी हुअी हैं जो दिनमें आकाशके तारोंकोदेख लें, कानमें भी शक्तियाँ छिपी हुअी हैं जो दूरके रेडिओ स्टेशनसे विस्तारित ध्वनियोंको पकडे आंखमें भी शक्तियाँ छिपी हैं

जो समय और क्षेत्रकी सीमाओंको पार करके देखती हैं। लेकिन, अध्यात्मसे इनका कोई बहुत संबंध नहीं है। तो संजय कोई बहुत अध्यात्मी व्यक्ति हो ऐसा नहीं है। संजय विशिष्ट व्यक्ति जरूर है वह दूर युद्धके मैदानपर जो हो रहा है उसे देख पा रहा है। और संजय को शक्ति के कारण कोई परमात्माकी शक्ति उपलब्ध हो गयी हो ऐसा तो नहीं है, संभावना तो यही है कि संजय इस शक्तिका उपयोग करके ही समाप्त हो गया हो, अकसर ऐसा होता है। विशेष शक्तियाँ व्यक्तिको बूरी तरह बहका देती हैं। इसलिए योग निरन्तर कहता है चाहे, शरीरकी सामान्य शक्तियाँ हैं और चाहे मनकी साइकिल पावरकी विशेष शक्तियाँ, वो शक्तियोंमें भी वह व्यवस्था है कि वे सत्य तक नहीं पहुँच पाती हैं। पर, यह संभव है और इधर पिछले सौ वर्षोंमें पश्चिममें साइकिल रिसर्चमें बहुत काम हुआ है। और अब किसी आदमीको संजय पर संदेह करने का कोई कारण वैज्ञानिक आधार पर नहीं रह गया है। और ऐसा ही नहीं कि अमेरिका जैसे धर्मको स्वीकार करनेवाले देशमें ऐसा हो रहा हो। उसके भी मनोवैज्ञानिक मनुष्यकी अनन्त शक्तियोंको निरन्तर स्वीकार करते चले जा रहे हैं। और अभी चाँद पर जानेकी घटना के कारण रुस और अमेरिकाके सारे मनोवैज्ञानिकों पर एक नया काम आ गया। और वह यह है कि यंत्रोंपर बहुत भरोसा नहीं किया जा सकता। और वे दिन अन्तरिक्षकी यात्रा पर पृथ्वी के वासियों को भेजेंगे तो हम उन्हें गहन खतरेमें भेज रहे हैं। और अगर यंत्र जरा भी बिगड जाये तो उनके संबंध हमारे लिये सदा के लिये टूट जाएंगे और फिर हम कभी भी पता नहीं लगा सकेंगे कि वे यात्री कहाँ खो गऐं। वे जीवित, जीवित नहीं है वे किस अनंतरमें भटक गऐं। हम उनका कोइ भी पता नहीं लगा सकेंगे। इसलिए एक सबस्टीटयुट एक परिपूर्वक व्यवस्था की तरह दूरसे बिना धमके देखा जा सके, सुना जा सके एक खबर भेजी जा सके इसके लिए रुस और अमेरिकाकी दोनोंकी

वैज्ञानिक प्रयोगशालाऐं अति आतुर हैं और बहुत देर न होगी कि रुस और अमेरिका दोनोंके पास संजय होंगे। हमारे पास नहीं होंगे। संजय कोई बहुत आध्यात्मिक व्यक्ति नहीं है लेकिन, संजयके पास एक विशेष शक्ति है जो हम सबके पास भी है और विकसित हो सकती है।

संजय उवाच

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा।
आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम्।
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥३॥

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥४॥

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्।
पुरुजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः ॥५॥

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान्।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ॥६॥

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥७॥

इस पर संजय बोला,–उस समय राजा दुर्योधनने व्यूहरचना युक्त पाण्डवोंकी सेनाको देखकर और दोणाचार्यके पास जाकर यह वचन कहा ॥२॥

हे आचार्य ! आपके बुद्धिमान् शिष्य द्रुपदपुत्र धृष्टधुम्नद्वारा व्यूहाकार खड़ी की हुई पाण्डुपुत्रोंकी इस बडी भारी सेनाको देखिये ॥३॥

इस सेनामें बडे बडे धनुषोंवाले युद्धमें भीम और अर्जुनके समान बहुतसे शूरवीर हैं जैसे सात्यकि और विराट तथा महारथी राजा द्रुपद ॥४॥

और धृष्टकेतु, चेकितान तथा बलवान् काशिराज, पुरुजित् कुन्तिभोज और मनुष्योंमें श्रेष्ठ शैब्य ॥५॥

और पराक्रमी युधामन्यु तथा बलवान् उत्तमौजा, सुभद्रापुत्र अभिमन्यु और द्रौपदीके पांचों पुत्र यह सब ही महारथी हैं ॥६॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! हमारे पक्षमें भी जो-जो प्रधान हैं उनको आप समझ लीजिये, आपके जाननेके लिये मेरी सेनाके जो जो सेनापति हैं उनको कहता हूँ ।७॥

मनुष्यका मन जब हीनताकी ग्रंथिसे पीडित होता है, जब मनुष्यका मन अपनेको भीतर हीन समझता है तब सदा हीन अपने श्रेष्ठताकी चर्चा से शुरू करता है । लेकिन जब हीन व्यक्ति नहीं होते तब सदा ही दूसरोंकी श्रेष्ठतासे चर्चा शुरू होती है । यह दुर्योधन कह रहा है भीष्मसे । पांडवोंकी सेनामें कौन कौन महारथी कौन कौन महानयोद्धा इकट्ठे हैं इससे वह शुरू कर रहा है । यह बात बड़ी प्रतीक थी । साधारणतया शत्रुकी प्रसंशा से बात शुरू नहीं होती है । साधारणतः शत्रुकी निंदासे बात शुरू होती है । साधारणतः उनके साथ अपनी प्रशंशा की बात शुरू होती है । अुनकी सेनामें कौन कौन महावीर इकट्ठे हैं दुर्योधन उनसे बात शुरू कर रहा है। दुर्योधन कैसा भी व्यक्ति हो हीनताकी ग्रंथिमें पीडित व्यक्ति नहीं है। और यह बडे मजेकी बात है अच्छा आदमी भी अगर हीनताकी ग्रंथिसे पीडित हो तो उस बूरे आदमीसे भी बदतर होता है जो हीनताकी ग्रंथिसे पीडित नहीं है ।

दूसरेकी प्रशंसासे केवल वही शुरू कर सकता है जा अपने प्रति बिलकुल आश्वस्त है । यह एक बुनियादी अंतर सदियोंमें पड़ा है। बुरे आदमी पहले भी थे, अच्छे आदमी पहेले भी थे। अैसा नहीं है कि आज बुरे आदमी बढ़ गए हैं और अच्छे आदमी कम हो गए हैं । आज भी बुरे आदमी उतने हैं अच्छे आदमी उतने ही हैं अन्तर क्या पडा है ? निरंतर धर्मका विचार करनेवाले लोग ऐसा प्रचार करते रहते हैं पहले लोग अच्छे थे और अब लोग बुरे हो गए हैं। ऐसी उनकी धारणा मेरे खयालमें बुनियादी रूपसे गलत है । अन्तर इतना उपरी नहीं है अन्तर बहुत भीतरी पडा है । बुरा आदमी भी पहले हीनताकी ग्रंथिसे पीडित नहीं था, आज अच्छा आदमी भी हीनताकी ग्रंथिसे पीडित है यह गहरेमें अंतर पडा है । आज अच्छे से अच्छा आदमी भी बाहरसे ही अच्छा है। भीतर स्वयंमें भी आश्वस्थ नहीं है । उसकी अच्छाई टिकनेवाली अच्छाई नहीं हो सकती । और ध्यान रहे जिस आदमीका आश्वास्थ स्वयंपर नहीं हैं उसकी अच्छाई टिकनेवाला अच्छाई नहीं हो सकती ! बस, स्किनडिप होगी, चमडीके बराबर गहरी होगी, जरा खरोंच दो और उसकी बुराइ बाहर आ जाएगी । और जो बुरा आदमी अपने बुराईके होते हुए भी आस्वास्थ है उसकी बुराअी भी किसी दिन बदली जा सकती है । क्यों कि एक बहुत गहरी अच्छाई बुनियादमें खड़ी है। वह स्वयंका आश्वासन है । इस बात को मैं महत्त्वपूर्ण मानता हूँ कि दुर्योधन जैसा बुरा आदमी एक बहुत ही शुद्ध ढंगसे चर्चाको शुरू करता है । तो विरोंधीके गिरोहका पहले अुल्लेख कर रहा है । सिर्फ, पीछे अपनी सेनाके महारथियोंका उल्लेख करता है ।

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः ।
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ॥८॥

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः ।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः ॥९॥

अपर्याप्तं तदस्माक बलं भीष्माभिरक्षितम् ।
पर्याप्तंत्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् ॥१०॥

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः ।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तःसर्व एव हि ॥११॥

एक तो स्वयं आप और पितामह भीष्म तथा कर्ण और संग्रामविजयी कृपाचार्य तथा वैसे ही अश्वत्थामा, विकर्ण और सोमदत्तका पुत्र भूरिश्रवा ॥८॥

तथा और भी बहुत से शूरवीर अनेक प्रकारके शस्त्र अस्त्रोंसे युक्त मेरे लिये जीवनकी आशाको त्यागनेवाले सब-के-सब युद्धमें चतुर हैं ॥९॥

और भीष्मपितामह द्वारा रक्षित हमारी वह सेना सब प्रकारसे अजेय है और भीमद्वारा रक्षित इन लोगोंकी यह सेना जीतनेमें सुगम है ॥१०॥

इसलिये सब मोर्चोपर अपनी अपनी जगह स्थित रहते हुए आपलोग सब-के सब ही निःसन्देह भीष्मपितामहकी ही सब ओरसे रक्षा करें ॥११॥

प्रश्न-आचार्यश्री, श्रीमद् भगवत् गीतामें सारा भार अर्जुन पर है और यहाँ गीतामें दुर्योधन जो कहता है दुर्योधनके खयालमें पांडवोंकी सेना भीमाभिरक्षितम् और कौरवको भीष्म, और भीष्मके सामने यह प्रश्न रखनेका यह मतलब नहीं हो सकता है कि वे शत्रुसे चिन्तित हैं ?

उत्तर-यह बिंदु विचारणीय है, सारा युद्ध अर्जुनकी धुरीपर है लेकिन यह पाछेसे सोची गयी बात है । युद्धके बाद युद्धकी निष्पत्ति पर । जो युद्धके पूरे फलको जानते हैं वे कहेंगे कि सारा युद्ध अर्जुनकी धुरीपर घूमा है । लेकिन जो युद्धके प्रारंभमें खड़े हैं वे ऐसा नहीं सोच सकते । दुर्योधनके लिए युद्धकी सारी संभावना भीमसे ही पैदा होती है । उनके कारण थे । अर्जुन जैसे भले व्यक्तिपर युद्धका भरोसा दुर्योधन भी नहीं कर सकता था।

अर्जुन डाँवाडोल हो सकता है। इसकी संभावना दुर्योधनके मनमें भी है । अर्जुन यह देखके माप सकता है इसकी गहरी अचेतन प्रतीति दुर्योधनके मनमें भी है । अगर युद्ध टिकेगा तो भीमपर टिकेगा युद्धके लिये भीम जैसे कम बुद्धिके लेकिन ज्यादा शक्तिशाली लोगोंपर भरोंसा किया जा सकता है ।

अर्जुन बुद्धिमान है । और जहाँ बुद्धि है वहां संशय है। और जहाँ संशय है वहाँ द्वन्द्व है। अर्जुन विचारशील है और जहाँ विचारशीलता है पूरेपूरे परिपेक्षको सोचनेकी क्षमता है वहाँ युद्ध जैसी भयंकर स्थितिमें आँख बंध करके उतरना कठिन है । दुर्योधन भरोसा कर सकता है युद्धके लिए भीमका । भीम और दुर्योधनके बीच गहरा सामंजस्य है । भीम और दुर्योधन एक ही प्रकृतिके बहुत गहरेमें एक ही ढंगके व्यक्ति है। असलिए दुर्योधनने ऐसा देखा कि भीम केन्द्र है । देखता है तो आकस्मिक नहीं लेकिन, यह युद्ध के प्रारंभकी बात है । युद्धकी निष्पत्ति क्या कहती है अन्त क्या होगा।

यह दुर्योधनको पता नहीं; हमें पता है। और ध्यान रहे अक्सर ही जीवन जैसा प्रारंभ होता है वैसा अन्त नहीं होता। अक्सर ही अन्त सदा ही अनिर्णित, अन्त सदा ही अदृश्य, अक्सर ही जो हम सोचकर चलते हैं वह नहीं होता।

जीवन एक अज्ञात यात्रा है। इसलिए जीवनके प्रारंभिक क्षणोंमें किसी भी घटना के प्रारंभिक क्षणोंमें जो सोचा जाता है वह अन्तिम निष्पत्ति नहीं बनती और हम भाग्यके निर्माणकी चेष्टामें रत हो सकते हैं लेकिन, भाग्यके निर्णायक नहीं हो पाते। निष्पत्ति कुछ और होती है। खयाल तो दुर्योधनका यही था कि भीम केन्द्र पर रहेगा। और अगर भीम केन्द्र पर रहता तो शायद दुर्योधन जो कहता है कि हम विजयी हो सकेंगे, हो सकता था। लेकिन दुर्योधनकी दृष्टि सही सिद्ध नहीं हुयी। और आकस्मिक तथ्य बीचमें उतर आया, वह भी सोच लेने जैसा है।

कृष्णका खयाल ही न था कि अगर अर्जुन भागने लगे तो कृष्ण उन्हें युद्धमें रत करवा सकते है। हम सबको भी खयाल नहीं होता। जब हम जिंदगीमें चलते हैं तो एक अज्ञात परमात्मा की तरफसे भी बीचमें कुछ होगा, इसका हमें कभी खयाल नहीं होता। हम जो भी हिसाब लगाते हैं वह दृश्यका होता है। अदृश्य भी बीचमें उतर आएगा इसका हमें बिलकुल खयाल नहीं होता। कृष्णके रूपसे अदृश्य बीचमें उतर आया है। और, सारी कथा बदल गयी है। जो होता वह भी नहीं हुआ और जो नहीं होनेकी संभावना मालूम होती थी वह हुआ। और, अज्ञात जब उतरता है तो उसके प्रतिक्षिप्त नहीं होगा, उसकी कोई भविष्य वाणी नहीं होगी। इसलिए जब कृष्ण भागते हुए अर्जुन को धक्का देने लगे तो जो भी इस कथाको पहली बार पढ़ता है वह शोट खाए बिना नहीं रह सकता। उसको धक्का लगता है।

नेशियनने जब पहली बार गीता पढ़ा तो उसने किताब बंद कर दी। वह घबड़ा गया। क्योंकि जो अर्जुन कह रहा था वह सभी तथा-कथित धार्मिक लोगों को ठीक मालूम पड़ेगा। वह ठीक तथा कथित धार्मिक आदमीका तर्क दे रहा था। जब हेनरी थोरो ने इस जगह आकर देखा कि कृष्ण उसे युद्धमें जानेकी सलाह देते हैं तो वह भी घबडा गया।

हेनरी थोरोने भी लिखा है कि ऐसा भरोसा नहीं था, खयाल भी नहीं था कि कहानी ऐसा मोड लेगी। कृष्ण और युद्धमें जाने की सलाह देंगे!

गांधीकी भी वही तकलीफ थी। उनकी पीड़ा भी वही थी लेकिन जिंदगी किन्हीं सिद्धान्तों के हिसाबसे नहीं चलती। जिंदगी बहुत अनूठी है। जिंदगी रेलका पटरियोंपर बहती नहीं हैं। गंगाकी धारा की तरह बहती है। उसके रास्ते पहलेसे तय नहीं है। और, जब परमात्मा बीचमें आता है तो सब "डिस्टर्ब" कर देता है। जो तैयार था, जो आदमीने निर्मित किया था जो भी आदमीकी बुद्धि सोचती थी सब उलटफेर हो जाता है। इसमें बीचमें परमात्मा भी उतर आएगा जिसकी दुर्योधनको कभी कल्पना भी नहीं थी। इसलिए जो वह कह रहा है प्रारंभिक वक्तव्य हैं। जैसा कि हम सब आदमी जिंदगी के प्रारंभमें जो वक्तव्य देते हैं। ऐसे ही होते हैं। बीचमें अज्ञात उतरता चलता है और सब कहानी बदलती चलती हैं। और अगर इस जिंदगी के पीछेसे लौटके देखे तो हम कहेंगे जो भी हमने सोचा था सब गलत हुआ, जहाँ सफलता सोची थी वहाँ असफलता मिली। जो पाना चाहा था वह नहीं पाया जा सका। जिसके निर्णयसे सुख सोचा था वह नहीं हुआ और दुःख पाया। और जिसके निर्णयसे कभी कामना भी नहीं कि थी उसकी झलक मिली और आनंद के झरने फूटे। सब उलटा हो जाता है लेकिन, इतना बुद्धिमान आदमी जगतमें कम है जो निष्पत्ति को पहले ध्यानमें ले।

हम सब प्रारंभ को ही पहले ध्यानमें लेते हैं। काश ! हम अंतको पहले ध्यानमें लेते। जिंदगीकी कथा बिलकुल और हो सकती। लेकिन, अगर दुर्योधन अन्त को पहलें ध्यान में ले लें तो युद्ध नहीं हो सकता। दुर्योधन अन्त को ध्यानमें नहीं ले सकता। अन्त को मानकर चलेगा कि ऐसा होगा। इसलिए वह कह रहा है बार बार, यद्यपि सेनाऐं उस तरफ महान हैं, लेकिन जीत हमारी ही होगी। मेरे योद्धा जीवन देकर भी मुझे जिताने के लिए आतुर हैं लेकिन, हम अपनी सारी शक्ति भी लगादें तो भी असत्य जीत नहीं सकता। हम सारा जीवन भी लगा दें तो भी असत्य जीत नहीं सकता। इस निष्पत्ति का दुर्योधन को कोई भी बोध नहीं हो सकता। और सत्य जो कि हारता हुआ भी मालूम पडता हो अन्तमें जीत जाता है। असत्य प्रारंभ में जितता हुआ मालूम पडता है अन्त में हार जाता है। सत्य प्रारं-भमें हारता हुआ मालूम पडता है, अन्त में जीत जाता है। लेकिन, प्रारंभ से अन्त को देख पाना कहाँ संभव है? जो देख पाता है वह धार्मिक हो जाता है जो नहीं देख पाता है वह दुर्योधनकी तरह युद्धमें उतरता चला जाता है।

प्रश्न- आचार्यश्री, इससे अज्ञात का भी "विल" होता है एक व्यक्ति की अपनी भी "विल" होती है वे दोनों आंतरिक होते हैं और व्यक्ति किस तरह जानता है कि अज्ञात की क्या "विल" है? अज्ञात की क्या इच्छा है?

उत्तर—पूछते हुए व्यक्ति कैसे जान पाए कि अज्ञातकी क्या इच्छा है। व्यक्ति कभी नहीं जान पाता। हाँ, व्यक्ति अपने को छोड़ दे, मिटा दे, तो तत्काल जान लेता है। अज्ञात के साथ एक हो जाता है।

बुंद नहीं जान सकती कि सागर क्या है? जबतक कि बुंद सागरमें स्वयं खो नहीं जाय। व्यक्ति इसलिए नहीं जान सकता कि परमात्मा की इच्छा क्या है? जबतक व्यक्ति अपने को व्यक्ति बनाए हुए रखें तबतक नहीं जान सकता। व्यक्ति अपने को खो दे तो फिर परमात्मा की इच्छा ही शेष रह जाती है। क्यों कि व्यक्तिकी कोई भी इच्छा शेष नहीं रह जाती। तब जाननेका सवाल ही नहीं उठता तब व्यक्ति वैसे ही जीता है-जैसा अज्ञात उसे जिलाता है। तब व्यक्ति की कोई आकांक्षा, तब व्यक्ति की कोइ फलाकांक्षा, तब व्यक्ति की कोई अपनी अभिप्सा, तब व्यक्ति को समग्रकी आकांक्षा के उपर अपना थोपने की कोई वृत्ति शेष नहीं रह जाती। क्योंकि व्यक्ति शेष नहीं रह जाता। जबतक व्यक्ति है, तबतक अज्ञात क्या चाहता है नहीं जाना जा सकता। और जब व्यक्ति नहीं है, तब जानने की कोई जरुरत नहीं है।

जो-भी होता है, वह अज्ञात ही करवाता है। तब व्यक्ति इसलिए शेष नहीं रह जाता, तब व्यक्ति साधनमात्र हो जाता है। कृष्ण पूरी गीतामें आज, अर्जुनको यह समझाते हैं कि वह अपनेको छोड़ दें। अज्ञातके हाथोंमें समर्पित कर दें। क्यों कि वह जिन्हें सोच रहा है कि ये मर जाएंगे वे अज्ञात के द्वारा पहले-ही-मर जा चूके हैं। कि वह जिन्हें सोचता है कि इनकी मृत्युके लिए मैं ही जिम्मेदार हो रहा हूँ उनके लिए वह बिलकुल भी जिम्मेदार नहीं होता। अगर वह अपने को बचाता है तो जिम्मेदार हो जाएगा। और अगर, अपने को छोड़कर साधनवत्, साक्षीवत् लड़ सकता है-तो उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं रह जाती है। व्यक्ति अपने को खोवें समष्टि में, व्यक्ति अपनेको समर्पित कर दें, छोड़ दें अहंकार को तो सिंधु की अिच्छा ही फलित होती है। अभी भी वही फलित हो रही है। ऐसा नहीं कि हम उससे भिन्न फलित करवा लेंगे लेकिन हम भिन्न फलित करानेमें लड़ेंगे, टूटेंगे, नष्ट होंगे।

एक छोटी सी कहानी मैं निरंतर कहता रहता हूँ, । मैं कहता रहा हूँ कि एक नदीमें बहुत बाढ़ आओी और दो छोटेसे तिनके उस नदीमें बह रहे हैं । एक तिनका नदीमें आड़ा पड़ गया । और नदी की बाढ़ को रोकनेकी कोशिश कर रहा है । बहुत जोरसे वह चिल्ला रहा है कि नहीं बढ़ने देंगे नदी को। और फिर भी नदी बढ़ती चली जा रही है। वह चिल्ला रहा है कि रोकके रहेंगे। वह फिर भी रोक नहीं पा रहा है और वह चिल्ला रहा है कि नदी को हर हालतमें रोकके ही रहेंगे। जिए चाहे मरें । लेकिन, बहा जा रहा है ।

नदीको न उसकी आवाज सुनाई पड़ती है और न उसके संघर्ष का पता चलता है । वह छोटा सा तिनका नदीको उसका कोई भी पता नहीं। नदी को कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता लेकिन, तिनके को बहुत फ़र्क़ पड़ रहा है । उसकी जिंदगी बडी मुसीबतमें पड़ गयी है-बहा जा रहा है । जहाँ पहुँचेगा वहीं पहुँचेगा लड़के भी । लेकिन यह बीचकी क्षण, यह बीचका खाली दुःख, पीड़ा और द्वन्द्व और चिन्ताका काल हो जायेगा । उसके पड़ोसमें दूसरे तिनकेने अपने को छोड़ दिया है। वह नदीमें आडा नहीं पड़ा हैं, सीधा पड़ा हैं । नदी जिस तरफ बह रही है-उसी तरफ। और सोच रहा है-कि मैं नदी को बहानेमें सहायता दे रहा हूँ। इसका भी नदी को कोई पता नहीं है। वह सोच रहा है कि मैं नदीको सागरतक पहुँचा ही दूँगा मेरे साथ है तो पहुँच ही जाएगी ।

नदी को उसकी सहायता का कोई पता नहीं है। लेकिन, नदी को कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता । लेकिन, इन दोनों तिनकों को बहुत फ़र्क़ पड़ रहा है। जो नदी को साथ बहा रहा है वह बडे आनंदमें है वह बड़ी मौजमें नाच रहा है और वह तो नदीसे लड़ रहा है-वह बड़ी पीड़ामें है। उसका नाच, नाच नहीं है, दुःस्वप्न है वह तकलीफमें पड़ा है हार रहा है।

और जो नदी को बहा रहा है-वह जीत रहा है। व्यक्ति द्वन्द्व की इच्छा के अतिरिक्त कुछ कर नही पाता है। लेकिन, बह सकता है। और लड़के अपने को चिन्तित कर सकता है-इतनी स्वतंत्रता है,

सात्रक । एक वचन है जो बड़ा कीमती है। वचन है आदमी स्वतंत्र होने के लिए मजबूर है विवश है, लेकिन स्वतंत्रताका दुरूपयोग कर सकता है। अपनी स्वतंत्रता को वह ब्रह्मकी इच्छासे संघर्ष बना सकता है। और तब उसका जीवन दुःख, पीडा का जीवन होगा और अन्तमें पराजय फल होगी। कोई व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता को द्वन्द्वके प्रति समर्पित बना सकता है-तब जीवन आनंद का, नृत्य का, गीतका जीवन होगा। और अन्त, अन्तमें विवेक के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। वह जो तिनका साच रहा है कि नदी को साथ दे रहा हूँ वह विजयी होनेवाला है उसकी हारका कोई उपाय नहीं है।

ब्रह्मकी इच्छा को नहीं जाना जा सकता। लेकिन, ब्रह्मके साथ एक हुआ जा सकता है। और तब, अपनी इच्छा खो जाती है। उसकी इच्छा ही शेष रह जाती है।

प्रश्न : आचार्यश्री, सिद्धिमें व्यक्ति का अपना कुछ होता है और वैज्ञानिक सिद्धिमें कैसे उतरता होगा वह एक बड़ी तकलीफ की बात बन जाती होगी।

उत्तर : ऐसा साधारणतः लगता है कि वैज्ञानिक खोजमें व्यक्ति की अपनी इच्छा काम करती है। ऐसा बहुत ऊपरसे देखनेपर लगता है। बहुत भीतरसे देखनेपर ऐसा नहीं लगेगा। अगर जगत के बड़ेसे बड़े वैज्ञानिकोंको हम देखें तो हम बहुत हैरान हो जाअेंगे।

जगतके सभी बड़े वैज्ञानिकों के अनुभव बहुत और हैं। कॉलेज युनिवर्सिटीमें वैज्ञानिक की जो धारणा पैदा होती है वैसा अनुभव उनका नहीं है। मैडम क्यूरीने लिखा है कि मुझे एक सवाल दिनों से पीडित किए हुए है। उसे हल करती हूँ और वह हल नहीं होता। थक गयी हूँ, परेशान हो गयी हूँ। आखिर हल करने की बात छोड दी और एक रात दो बजे वैसे ही कागजात टेबल पर अधूरे छोडकर सो गयी। यह सोच लिया था कि अभी इस सवाल को छोड़ ही देना है। थक गया व्यक्ति।

लेकिन सुबह ऊठकर देखा तो आधा सवाल जहाँ छोड़ा था वह सुबह पूरा हो गया है। कमरे में तो कोई आया नहीं द्वार बंद था। कमरेमें भी काई आके कोई उसको हल कर सकता था? मैडम क्यूरी जिसको हल नहीं कर सकती थी। इसकी भी संभावना नहीं। मैडम "प्राईझ वीनर" थी वह महिला। घरमें नौकर चाकर ही थे। उनसे तो कोइ आशा नहीं है वे तो ओर वड़ा नाकर चाकर आके हल कर दें। लेकिन, हल तो हो गया औंर ही छोर। और आधा पूरा है। तब वह मुश्किल में पड़ गयी। सब द्वार दरवाजे देखें। कोई परमात्मा उतर आए उसकी भी आस्था उसे नहीं हो सकती कोई परमात्मा उपरसे उतर भी नहीं आया था। जितना गौरसे देखा तो पाया कि बाकी अक्षर भी उसके ही हैं तब उसे ख्याल आना शुरू हुआ कि रातको वह नींद, स्वप्न में उठी। सपने का उसे याद आ गया कि वह सपने में उठी और उसने स्वप्न में देखा कि वह सवाल ठीक कर रही हैं। वह नींदमें उठी है और वह सवाल हल किया। फिर तो वह बहुत सिद्धिविद्धि हो गयी। जब कोई सवालका हल न होता तब वह उसको तकिये के नीचे दबाकर सो जायँ। रातको उठकर करलें। दिनभर तो मैड़म क्यूरी इन्डिविज्वल थी। रात नींदमें वह खो जाती है। वूंद सागर से मिल जाती है और जो सवाल हमारा चेतन मन नहीं खोज

पाता वह हमारा अचेतन में गहेर में वह जो परमात्मा से जुड़ा है खोज पाता है।

आर्किमिडिज भी एक सवाल हल कर रहा था। लेकिन वह हल नहीं हो पाता था। वह बड़ी मुश्किलमें पड़ गया था। सम्राटने कहा हल करके ही लाओ। आर्किमिड़िज की सारी प्रतिष्ठा हल करने पर निर्भर थी। लेकिन थक गया। रोज सम्राट का संदेश आता है कि कबतब हल करोगे?

सम्राट को किसीने एक सोने का बहुत किंमती आभूषण भेंट किया था। लेकिन, सम्राट को संदेह है कि कहीं धोका तो दिया न गया हो। और, सोने में कुछ मिला है। लेकिन, बिना आभूषण को मिटाएं पता लगाना कि इसमें कोई और घातु तो नहीं मिला है? तब उस वक्त कोई उपाय नहीं था जानने का और बड़ा था आभूषण। उसके कहीं बीचमें अगर अंदर कोई चीज ड़ाल दी गयी हो तो वजन तो बढ जाएगा।

आर्किमिडिज थक गया, परेशान हो गया, आर्किमिडिज सुबह अपने टबमें लेटा हुआ पडा है। तब अचानक नंगा ही था, सवाल हल हो गया। भागा, भूल गया। आर्किमिडिज अगर होता तो कभी न भूलता कि मैं नंगा हूँ। सड़क पर आ गया और चिल्लाने लगा, 'मिल गया मिल गया' और भागा राजमहल की तरफ। लोगोंने पकड़ा कि क्या कर रहे हो? राजाके सामने नंगे शरीर जाओगे? उसने कहा यह तो मुझे खयाल ही न रहा। घर वापिस आया।

यह जो आदमी सड़क पर पहुँच गया था नग्न यह आर्किमिडिज नहीं था। आर्किमिडिज नहीं पहुँच सकता था। यह व्यक्ति नहीं था और यह जो हल हुआ सवाल यह व्यक्ति की चेतनामें हल नहीं हुआ। यह निरव्यक्ति की चेतनामें हल हुआ था। वह बाथरुममें पड़ा था अपने टबमें। लेकिन, ध्यान घट गया। भीतर उतर गया, सवाल हल हो गया। जो सवाल स्वयंसे हल नहीं हुआ था, वह टबने हल कर दिया। टब हल

करेगा सवालको ? जो स्वयं से हल नहीं हुआ वह पानीमें लेटने से हल होता है। पानीमें लेटनेसे अगर बुद्धि बढ़ जाती है, जो कपडे पहनने से हल नहीं हुआ वह नंगे होने से हल हो जाएगा ? नहीं कुछ और घटना घटी। यह व्यक्ति नहीं रहा कुछ देरके लिए अव्यक्ति हो गया। यह कुछ देर के लिए ब्रह्म स्रोत में खो गया। अगर, इस जगतके सारे बड़े वैज्ञानिकोके आइंस्टीनके, मेक्सलिनके एबिनके, एडिसन के इनके अगर हम अनुभव पढेंगे तो इन सबका अनुभव यह है कि जो भी हमने जाना वह हमने नहीं जाना। निरंतर ही ऐसा हुआ है कि जब हमने जाना तब हम नहीं थे और, जानना घटित हुआ।

यही उपनिषद के ऋषि कहते हैं यही वेद के महर्षि कहते हैं यही मोहम्मद कहते हैं, यही जिसस कहते हैं। अगर हम कहते हैं कि वेद अपौरुषेय है उसका और कोई मतलब नहीं। इसका यह मतलब नहीं कि ईश्वर उतरा और उसने एक किताब लिखी। ऐसी पागलपनको बातें करनेकी कोई जरुरत नहीं। अपौरुषेय का इतना ही मतलब है कि जिस पुरुष पर यह घटना घटी है उस वक्त वह मौजूद नहीं था। उस वक्त मैं मौजूद नहीं था। जब यह घटना घटी तब यह वचन उतरा पृथ्वी पर और जब यह मोहम्मद पर कुरान उतरी और जब बाईबिल के वचन जीसस पर उतरे तब वह मौजूद नहीं थे।

धर्म और विज्ञान के अनुभव भिन्न भिन्न नहीं हैं, हो नहीं सकते। क्योंकि अगर विज्ञानमें कोई संशय करता है तो उसके उतरने का भी मार्ग वही है। जो धर्म में उतरता है। सत्यके उतरने का एक ही मार्ग है। जब व्यक्ति व्यक्ति नहीं होता तब परमात्मा से सत्य उतरता है। हमारे भीतर जगह खाली हो जाती है उस खाली जगहमें सत्य प्रवेश करता है। वह दुनियामें कोई भी ढंगसे, चाहे कोई संगीतज्ञ हो, चाहे कोइ चित्रकार, चाहे कोई वैज्ञानिक, चाहे कोई धार्मिक, दुनियामें जिन्होंने तभी पाया है जब वे स्वयं नहीं रहे थे।

यह धर्म को तो बहुत पहलेसे खयालमें आ गया लेकिन धर्मका अनुभव १० हजार वर्ष पुराना है। १० हज़ार सालमें धार्मिक फकीर को, धार्मिक संत को धार्मिक योगी को यह अनुभव हुआ कि यह मैं नहीं हूँ। यह बडी मुश्किल बात है। जब पहली दफे आपके भीतर, परमात्मासे कुछ आता है तब विश्लेषण करना बहुत मुश्किल होता है कि आपका है कि परमात्माका है। जब पहली दफा आता है तो मन डाँवाडोल होता है। मन तो मेरा ही होगा और अहंकारकी इच्छा भी होती है कि मेरा ही हो लेकिन, धीरे धीरे, जब दोनों चीजें साफ होती हैं और पता चलता है कि आप और इनके सबके बीच कोइ भी तालमेल नहीं बनता तब फासला दिखाई पडता है। विज्ञान क्या है यही है।

अभी दो-तीन सौ सालकी ही बात है। दो-तीन सौ सालमें वैज्ञानिक विनम्र हुअे हैं। आज से पचास साल पहले वैज्ञानिक कहता था, कि, 'जो खोजा हमने खोजा'। आज नहा कहता है। आज वह कहता है हमारी सामर्थ्य के बाहर मालूम पडता है सब। आजका वैज्ञानिक उतनी ही रहस्यकी भाषामें बोलता है जितना संत बोलते थे। इतनी जल्दी नहीं करे। और सौ साल देखिये वैज्ञानिक ठीक वही भाषा बोलेगा जो उपनिषद बोलते हैं। बोलनी ही पडेगी वही भाषा जो बुद्ध बोलते हैं बोलनी ही पडेगी वही भाषा जो आइंस्टिन, फ्रांसिस बोलते हैं। बोलनी पड़ेगी असिलिए कि जितना जितना सत्यका गहरा अनुभव होगा, उतना उतना व्यक्तिका अनुभव क्षीण होता है। और जितना सत्य प्रकट होता है, उतना ही अहंकार लीन होता है। और एक दिन पता चलता है कि, जो भी जाना गया है, वह प्रसाद है। वह प्रेस है, वह उतरा है। उसमें मैं नहीं हूँ। और जो भी मैंने नहीं जाना, उसकी जिम्मेदारी मेरी है क्योंकि मैं इतना मजबूत था, कि जान नहीं सकता। मैं इतना जटिल था कि सत्य नहीं उतर सकता था।

सत्य उतरता है खाली चित्तमें। शून्य चित्तमें, और असत्य उतारना हो तो मैं की मौजुदगी जरुरी है। इसलिए विज्ञान की खोजको बाधा नहीं पड़ेगी जो खोज हुई है, वह अज्ञात के संबंधसे जुडी हुई है। समर्पण से ही हुई है। और जो खोज होगी आगे, वह भी समर्पण से ही होगी। समर्पण के द्वारके अतिरिक्त सत्य कभी किसी और द्वारसे न आया है और न आ सकता है।

प्रश्न—आचार्यश्री, यह प्रश्न, आपका यह कथन, बड़ी दिक्कत में ड़ाल देता है कि अचेतन मन भगवान से जुडा हुआ होता है। यह तो हमें पिछेसे बताया लेकिन फ्रायड कहता है कि वह शैतान से भी जुड़ा हुआ होता है। तो यह भ्रांति पड़ जाती है।

उत्तर— फ्रायड़ का ऐसा जरुर ख्याल है। वह जो अचेतन मन है हमारा वह भगवान से ही नहीं, शैतान से भी जुड़ा होता है। असलमें भगवान और शैतान हमारे शब्द है। जब किसी चीज को हम पसंद करते हैं तो भगवान से जुड़ा हैं। लेकिन, मैं इतना ही कह रहा हूं कि 'अज्ञात' से जुड़ा है। और, अज्ञात मेरे लिए भगवान है। और भगवान मेरे लिए शैतान समाविष्ट है। उससे अलग नहीं है। मन होता है कि वह शैतान ने किया होगा जो हमें पसंद है। मन होता है कि वह भगवान ने किया होगा। ऐसा हमने सोच रखा हैं कि हम केन्द्र पर हैं जीवन के और, जो हमारे पसंद होता है वह भगवान का दिया हुआ होता है। भगवान हमारी सेवा कर रहा है। जो पसंद नहीं पड़ता वह शैतान का दिया हुआ होता है, शैतान हमारी दुश्मनी कर रहा है। यह मनुष्य का अहंकार है। जिसे न कि शैतान और भगवान को अपनी सेवा में भी लगा रखा है। भगवान के अतिरिक्त कुछ है ही नहीं जिसे हम शैतान कहते है वह सिर्फ हमारी अस्वीकृति है। जिसे हम बूरा कहते हैं वह हमारी अस्वीकृति है। और अगर हम बूरेमें भी गहरे

देख पाएँ तो फौरन हम पाऐंगे कि बूरे में भी भला छिपा है। दुःख में भी गहरे देख पाए, तो पाऐंगे कि सुख छिपा होता है। अभिशापमें भी गहरे देख पाएं तो, पायेंगे कि वरदान छिपा होता है। असल में बूरा और भला दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। शैतान के खिलाफ जो भगवान है उसे मैं अज्ञात नहीं कह रहा हूं।

मैं अज्ञात उसे कह रहा हूं जो हम सबकी जीवन भूमि है। जो अस्तित्व का आधार है। उस अस्तित्व के आधार से राम भी निकलते हैं। उस अस्तित्व से अंधकार भी निकलता है उस अस्तित्व से प्रकाश सी निकलता है। हमें अंधकारमें डर लगता है तो मत होता है कि रोशनी भगवान पैदा करता होगा। लेकिन, अंधकार में भी परमात्मा को पायेगा। सच तो यह है कि अंधकारके भयके कारण, हम कभी उसके सौंदर्य को जान नहीं पाते।

हमारा भय मनुष्य निर्मित भय है। कन्दराओं से आ रहे हैं हम। जंगली कन्दराओं से होकर गुजरे हैं हम। अंधेरा बड़ा खतरनाक था, जंगली जानवर हमला कर देते थे। रात ड़राती थी इसलिए, अग्नि जब पहली दफे प्रकट हो सकी तो हमने उसे देवता मनाया। क्योंकि, रातसे निश्चिंत हो गए। आग जलाके हम निर्भय हुए। अंधेरा हमारे अनुभव में भयसे जुड़ गया। रोशनी हमारे अनुभव में अभय से जुड़ गयी। यह एक अंधेरे का अपना रहस्य है। रोशनी का अपना रहस्य है। और, इस जीवनमें जो भी महत्त्वपूर्ण घटित होता है वह अँधेरे और रोशनी दोनोंके सहयोगसे घटित होता है

एक बीज हम गढ़ाते है अंधेरेमें, फूल आता है-रोशनी में। बीज हम गढ़ाते है अंधेरेमें जमीनमें जड़ें फलती है। फूल खिलते हैं आकाशमें, रोशनीमें। एक बीजको रोशनीमें रख देते फिर फूल कभी नहीं आऐंगे। एक फूल को हम अंधेरे में गढ़ा दें फिर बीज कभी नहीं पैदा होंगे। एक बच्चा पैदा होता है माँ के पेट में, माँके

पेट के गहन अंधकारमें जहाँ रोशनीकी एक किरण नहीं पहुँचती। फिर, जब बड़ा होता है तो आता है प्रकाशमें। अंधेरा और प्रकाश एक ही जीवन शक्ति के लिए आधार है। जीवनमें विभाजित, विरोध प्योरिटी मनुष्यकी है। फ्रायड जो कहता है कि शैतान है जुड़ा है। फ्रायड यहुदी चिंतन है जुडा है। फ्रायड यहुदी चिंतन है जुड़ा था, फ्रायड यहुदी घरमें पैदा हुआ था, बचपनमें ही परमात्मा और शैतान के विरोध को उसने सुन रखा था। यहुदियोंने दो हिस्से तोड़ रखे हैं। एक शैतान है, एक भगवान है। वह आदमी के ही मन के दो हिस्से हैं तो फ्रायड को लगा कि जहां जहां है बूरी चीजें, वे अचेतनसे, वे बूरी बूरी चीजें शैतान डाल रहा होगा। नहीं, कोइ शैतान नहीं है। और अगर शैतान हमें दिखाई पड़ जाय तो कहां हमारी बुनियादी भूल है। धार्मिक व्यक्ति शैतानको देखनेमें असमर्थ है। परमात्मा और अचेतन भी जहाँ है वैज्ञानिक सत्य को पाता है या धार्मिक सत्यको पाता है। वह परमात्मा का द्वार है। धीरे धीरे हम इसकी गहराईमें उतरें तो निश्चित ख्याल आ सकता है।

तस्य संजनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः।
सिंहनादं विनद्योच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान् ॥१२॥

ततः शङ्खाश्च मेर्यश्च पणवानकगोमुखाः।
सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत् ॥१३॥

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्त महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवःपाण्डवश्चैव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः ॥१४॥

पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनंजय ः।
पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः॥१५॥

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरः।
नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥१६॥

इस प्रकार द्रोणाचार्यसे कहते हुए दुर्योधनके वचनोंको सुनकर कौरवोंमें वृध्धं बडे प्रतापी पितामह भीष्मने उस दुर्योधनके ह्रदयमें हर्ष उत्पन्न करते हुए उच्चस्वरमें सिंहकी नादके समान गर्जकर शंख बजाया ॥१२॥

उसके उपरान्त शंख और नगारे तथा ढोल, मृदंग और नृसिंहादि बाजे एक साथ ही बजे, उनका वह शब्द बड़ा भयंकर हुआ ॥१३॥

इसके अनन्तर सफेद घोडोंसे युक्त उत्तम रथमें बैठे हुए श्रीकृष्ण महाराज और अर्जुनने भी अलौकिक शंख बजाये ॥१४॥

उनमें श्री कृष्ण महाराजने पांचजन्य नामक शंख और अर्जुनने देवदत्त नामक शंख बजाया, भयानक कर्मवाले भीमसेनने पौण्ड्र नामक महाशंख बजाया ॥१५॥

कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिरने अनन्तविजय नामक शंख और नकुल तथा सहदेवने सुघोष और मणि पुष्पक नामवाले शंख बजाये ॥ १६ ॥

प्रश्न : श्री कृष्ण का शंखनाद यह भीष्म के शंखनाद की प्रतिक्रिया है?

उत्तर : नहीं। श्रीकृष्ण के शंखनाद सिर्फ प्रतिसंवेदन है। प्रतिक्रिया नहीं।

शंखनाद प्रति उत्तर है। युद्धका नहीं। युद्धके लिये तैयारी का नहीं। कृष्ण का शंखनाद सिर्फ स्वीकृति है। आह्वान जहाँसे भी आये और जहाँ ले जाय वहाँ जाने की मात्र स्वीकृति है। इस बातको समझने से थाडी उपयोगी हो सकेगी। हमारा जीवन भी प्रतिपात अेक आह्वान जैसा ही और जो उसका स्वीकार करते नहीं है सो जीते ही मर जाता है। दुनिया में प्रायः ज्यादा लोग

जीते ही मर जाते हैं। बर्नाडशो कहते थे कि 'लोग मरते तो हैं पहले लेकिन अुन्हें दफनाने की क्रिया बहुत दिनोंके बाद की जाती है। जिस दिन से व्यक्ति मुसीबतों का स्वीकार करना बंध कर देता है उसी दिन से वह व्यक्ति के नाते से मिट जाता है। जीवन की प्रतिक्षण आह्वान है।

यहाँ यह सोच ने जैसा है कि पहला शंखनाद पांडव की ओर से नहीं लेकिन कौरव की ओर से हुआ है। इसलिये युद्ध का प्रारंभ करना ही रहता है। कृष्ण तो केवल इसका प्रत्युत्तर ही दे रहा है। कृष्ण के शंखनाद में सिर्फ पांडवों की ओर का प्रतिसंवेदन है रीस्पोन्स है।

वास्तव में तो पांडवों के सेनापतियों ने शंखनाद का प्रत्युत्तर नहीं देना चाहिये, लेकिन यहाँ तो श्रीकृष्णके हाथ से दिया गया है उसमें बहुत रहस्य है। अिन दो बातों का प्रतीक है कि पांडव युद्ध को परमात्मा की ओरसे आयी हुअी अेक जिम्मेदारी समजते थे। न तो अपने आप युद्ध के लिये उत्सुक हैं कि न युद्ध से भयभीत थे। परमात्मा की ओरसे आथी हुई पुकार के लिये वे तैयार ैं परमात्मा के साधन होकर लड़ने के लिये तैयार हैं। उससे ही युद्ध की स्वीकृति का उत्तर कृष्ण की ओर से दिया गया वह उचित है। परमात्मा के साथ लड़ कर पराजित होना भी श्रेष्ठ है। और परमात्मा के विरुद्ध लड़कर जीत प्राप्त करना भी व्यर्थ है। अब अुन के लिये हार (पराजित होना) भी आनंद हो सकता है।

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः।
धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥१७॥

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते।
सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥१८॥

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत्।
नभश्च पृथवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥१९॥

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः ॥२०॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते।

अर्जुन उवाच

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥२१॥

यावदेतान्निरीक्षेहं योद्धुकामानवस्थितान्।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे ॥२२॥

योत्स्यमानानवेक्षेहं य एतेऽत्र समागताः।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥२३॥

संजय उवाच

एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् ॥२४॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थ पश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति ॥२५॥

तत्रापश्य त्स्थितान्पार्थः पितृनथ पितामहान्।
आचार्यान्मातुलान्भ्रातृन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥२६॥

श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि।

श्रेष्ठ धनुषवाला काशिराज और महारथी शिखण्डी और धृष्टद्युम्न तथा राजा विराट और अजेय सात्यकि ॥ १७ ॥

तथा राजा द्रुपद और द्रौपदीके पांचों पुत्र और बड़ी भुजावाला सुभद्राकुमार अभिमन्यु—अिन सबने हे राजन् ! अलग अलग शंख बजाये ॥ १८ ॥

और उस भयानक शब्दने आकाश और पृथ्वीको भी शब्दायमान करते हुअे धृतराष्ट्रपुत्रोंके हृदय विदीर्ण कर दिये ॥१९॥

हे राजन् ! उसके उपरान्त कपिध्वज अर्जुनने खड़े हुए धृतरा पुत्रोंको देखकर उस शस्त्र चलनेकी तैयारीके समय धनुष उठाकर ऋषीकेश श्रीकृष्ण महाराजसे यह वचन कहा, हे अच्युत मेरे रथको दोनों सेनाओंके बीचमें खड़ा करिये ॥ २०-२१ ॥

जबतक मैं इन स्थित हुए युद्धकी कामनावालोंको अच्छी प्रकार देख लूं कि इस युद्धरूप व्यापारमें मुझे किन-किनके साथ युध्ध करना योग्य है ॥ २२ ॥

और दुर्बुद्धि दुर्योधनका युद्धमें कल्याण चाहनेवाले जो-जो ये राजालोग इस सेनामें आये हैं, उन युद्ध करनेवालोंको मैं देखूंगा ॥ २३ ॥

संजय बोला, हे धृतराष्ट्र ! अर्जुनद्वारा इस प्रकार कहे हुए महाराज श्रीकृष्णचन्द्रने दोनों सेनाओंके बीचमें भीष्म और द्रोणाचार्यके सामने और संपूर्ण राजाओंके सामने उत्तम रथको खड़ा करके वेसे कहा कि, हे पार्थ ! इन इकठ्ठे हुए कौरवोंको देख ॥ २४-२५ ॥

उसके उपरान्त पृथापुत्र अर्जुनने उन दोनों ही सेनाओंमें स्थित हुए पिताके भाइयोंको, पितामहोंको, आचार्योंको, मामोंको भाइयोंको, पुत्रोंको, पौत्रोंको तथा मित्रोंको, ससुरोंको और सुहृदोंको भी देखा ॥२६॥

प्रश्न : अर्जुन जिन के साथ युद्ध करनेवाला है उन के सामने ले जाने का श्रीकृष्णको क्यों कहता है ?

उत्तर : अर्जुन युद्ध में जिन के साथ लड़नेवाला है अिनके सामने ले आने का इसलिये कहता है कि उनके लिये सिर पर आया हुआ दायित्व है। हृदय में से आयी हुई पुकार नहीं है। अुपरसे आयी हुई अेक मजबूरी, लाचारी है। हृदयमें से आयी हुई वृत्ति नहीं है। युद्ध सिर्फ अेक विवशता है। इसलिये जिसके साथ लड़ना है इसको अर्जुन प्रथम देख लेने की इच्छा करता है।

दूसरी बात यह भी हैकि जिस के साथ लड़नेका हो अुसको अच्छी तरह से पहचान लेना चाहिये। यह युद्धका पहला नियम है। समग्र युद्ध बाहरके हो कि अंदरके हो फिर भी जिस के साथ लड़ने का हो इसको ठीक तरह से पहचान लेना यह अत्यंत आवश्यक है। शत्रुकी पीछान यह युद्धमें प्रथम मित्र है। इसलिये सामान्य तौर पर जो युद्धपिपासु हो वह जी सकता नहीं है। इसका कारण यह है कि युद्धपिपासे की अग्निमें अितना पीड़ित होता है कि शत्रु को देखनेकी अुसकी दृष्टि ही नहीं रहती है। जिस के साथ लड़नेका है अुसकी पहचान नहीं होती है तो हार (पराजित होना) पहले से ही निश्चित है। इससे युद्ध की क्षणोंमें जितनी शान्ति चाहिये अुतनी शान्ति दूसरी किसी भी क्षणों में जरुरी नहीं है। अर्जुन जिस निरीक्षणकी बात करता है वह विचारणीय है। जहाँ निरीक्षणकी क्षमता होती है वहाँ क्रोध होता हो तो मानना चाहिये कि निरीक्षण नहीं है। दोनों अेक साथ नहीं हो सकते हैं।

यह मात्र क्रोधकी ही बात नहीं है। काम, क्रोध, लोभ वगैरह जिसको भी जीतना हो शत्रु बाहरका हो कि अंदरका हो फिर भी निरीक्षण जरूरी है। जा अर्जुनकी यह निरीक्षणकी बात समझ सके वे अबसे

ही समझ सकेंगे कि अर्जुन के लिये आगे चलकर लड़ने का मुश्किल होनेवाला है। यह व्यक्ति लड़ सकेगी नहीं। जब लड़ने के लिये झझूमनेकी तैयारी चाहिये इसकी जगह यह व्यक्ति तो निरीक्षणी बात करती है। यहाँ निरीक्षणताकी आवश्यकता नहीं है। गीता आगे समझे नहीं तो भी मनुष्य कहेंगे कि अर्जुन युद्धके लिये विश्वास करने लायक व्यक्ति नहीं है। यह व्यक्ति युद्धमें कार्य नहीं करे। युद्धमें से दूर हो जायेगी यह व्यक्ति विचारके आदी है। युद्ध तो यही कर सकता है जो दुर्योधन की तरह विचारहीन हो। या तो कृष्णकी तरह निर्विचार हो। विचारहीन विचार पहले की अवस्था है और दोनों के बीच है। विचारहीन व्यक्ति मित्रता करे तो भी इस मैत्रीमें अंतमें तो शत्रुता होती है। यह व्यक्ति प्रेम भी करती हो तो इसके प्रेम में भी युद्ध ही प्रमाणभूत (साबित) होता है।

अर्जुन निरीक्षणमें देखकर, समझकर तो युद्ध में से भाग जा सकता है। श्रीकृष्ण तीसरी निर्विचारकी सीढी पर है। निर्विचार वह है जिस विचारसे भी अतिक्रमण करके विचार की व्यर्थता को जानता हो विचार प्रेमकी, परिवार की, धन की जीवन से सबकी व्यर्थता समझाता है परंतु अगर कोओी विचार करता ही जाता हो तो प्रान्ते विचार की भी व्यर्थता समझाती है और तब व्यक्ति निर्विचार हो जाती है। फिर वह निर्विचार अवस्था में विचारहीन के लिये जो संभव है वह संभव हो जाता है। लेकिन कोळीटी (गुण) सब ही बदल जाता है।

जीसस को जब पूछनेमें आया कि तुम्हारे स्वर्ग में राज्यका मालिक कौन होगा तो जीससने कहा, 'जो बालक जैसा है।' अुन्होंने अैसा न कहा कि जो बालक है। अज्ञान की और परम-ज्ञानकी समानता है लेकिन अज्ञान के अंदर जटिलता छूपी हुई है। जो कभी प्रकट हो सकती है। ज्ञानीके अंदर ऐसी जटिलता रहती

नहीं है। जो निर्विचार है सो विचारका अतिक्रमण कर गया है। ध्यानमें पहुँच गया है।

अर्जुन के सामने सारी गीता में यही मुश्किली दिखाई पड़ती है अगर तो दुर्योधन खडा है वहाँ विचारहीन स्थिति में आ जाय अथवा तो जहाँ कृष्ण खडे हैं यह निर्विचारकी स्थिति में आ जाय तो ही युद्ध कर सके। लेकिन अगर वह अर्जुन ही रह जाय तो वह जंगल में जा सकेगा युद्ध में नहीं। पलायन कर देगा भाग छूटेगा।

तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान्बन्धूनवस्थितान्
कृपया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत् ॥२७॥

दृष्टेम स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् ॥२८॥

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते ॥२९॥

इस प्रकार उन खडे हुए संपूर्ण बन्धुओंको देखकर वह अत्यंत करुणासे युक्त हुआ कुन्तीपुत्र अर्जुन शोक करता हुआ यह बोला ॥२७॥

हे कृष्ण! इस युद्धकी इच्छावाले खडे हुए स्वजनसमुदायको देखकर मेरे अङ्ग शिथिल हुए जाते हैं और मुख भी सूखा जाता है और मेरे शरीरमें कम्प तथा रोमांच होता है ॥२८ २९॥

अर्जुन युद्धसे पीड़ित नहीं है। युद्ध विरोधी भी नहीं है। हिंसा के सम्बन्ध में उसकी कोई अरुचि भी नहीं है। उसके सारे जीवन का शिक्षण, उसके सारे जीवनका संस्कार हिंसा और युद्धको लेकर है लेकिन अैसी बात है कि जितना ही हिंसक चित्त हो

उतना ही ममत्वसे भरा हुआ चित्त होता है। हिंसा और ममत्व साथ ही साथ जीतें है। अहिंसक चित्त ममत्व के भी बाहर हो जाता है। असलमें जिसे अहिंसक होना हो उसे अपनेपनका भाव भी छोड़ देना पड़ता है। मेरेका भाव ही हिंसा है क्योंकि जैसे ही मैं कहता हूँ मेरा, वैसे ही जो मेरा नहीं है वह प्रथक् होना शुरू होता है। जैसे ही मैं किसी को कहता हूँ मित्र, वैसे ही मैं किसी को शत्रु निर्मित करना शुरू कर देता हूँ जैसे मैं सीमा खींचता हूँ अपनों की, वैसे ही परायोंकी सीमा भी खींच देता हूँ।

समस्त हिंसा अपने और परायों के बीच खींची गयी सीमासे पैदा होती है। इसलिए अर्जुन शिथिलगात्र हो गया, उसके अंग अंग शिथिल हो गये। इसलिए नहीं कि वह युद्धसे विरक्त हो गया। इसलिए नहीं कि उसे होनेवाली हिंसामें कुछ बूरा दिखाई पड़ा। इसलिए नहीं कि अहिंसा का कोई आकस्मिक आकर्षण उसके मन में जन्म ले गया बल्कि असलिए कि हिंसा के ही दूसरे पहलूने उसके भीतर, हिंसा के गहरे पहलू ने, हिंसा के ही बुनियादी आधार ने, उसके चित्तको पकड़ लिया।

ममत्व हिंसा ही है इसे न समझेंगे तो फिर पूरी गीता को समझना कठिन हो जायेगा। जो इसे नहीं समझ सकें उन्हें अैसा प्रतीत होता है कि अर्जुन अहिंसा की तरफ झुकता था। कृष्ण ने उसे हिंसा की तरफ झुकाया। जो अहिंसा की तरफ झुकता हो, कृष्ण उसे हिंसा की तरफ झुकाना नहीं चाहेंगे, जो अहिंसा की तरफ झुकता हो उसे कृष्ण भी हिंसाकी तरफ झुकाना चाहे तो भी नहीं झुका पायेंगे लेकिन अर्जुन अहिंसा की तरफ रत्तीभर भी न झुक रहा था।

अर्जुन का चित्त हिंसा के गहरे आधार पे जाकर अटक गया। वह हिंसा के ही आधारसे उसे दिखाई पड़े अपने ही लोग प्रियजन।

काश, वहाँ प्रियजन और सबंन्धी न होते तो अर्जुन भेड़ बकरियों की तरह लोगोंको काट सकता था अपने थे इसलिए काटनेमें कठिनाई मालूम पड़ी। पराये होते तो काटनेमें कोई कठिनाई न मालूम पडती। और अहिंसा केवल उसके चित्त में ही पैदा होती है जिसका अपना पराया मिट गया हो।

अर्जुन यह जो संकटग्रस्त हुआ उसका चित्त यह अहिंसा की तरफ आकर्षणसे नहीं, हिंसाके ही मूल आधार पर पहुँचने के कारण। स्वभावतः इतने संकट में इतने क्राईसेस में हिंसा की बुनियादी जो आधारशिला थी वह अर्जुन के सामने प्रगट हो गयी, अगर पराये होते तो अर्जुन को पता भी न चलता कि वह हिंसक है। उसे पता भी न चलता कि उसने कुछ बूरा किया। उसे पता भी न चलता कि युद्ध अधार्मिक है। उसके गात्र शिथिल न होते पर परायों को देखकर उसके गात्र और मन तैयार हो जाते, उसके धनुष्य पर बाण आ जाता, उसके मनमें तलवार आ जाती, वह बडा प्रफुल्लित हो जाता, लेकिन वह एकदम उदास हो गया। इस उदासी में अपने चित्त की हिंसाका मूल आधार दिखाई पडा। इस संकट के क्षणमें उसे ममत्व दिखाई पड़ा।

यह बडे आश्चर्य की बात है कि अक्सर हम अपने चित्तकी गहराइयों को केवल संकट के क्षणांमें देख पाते हैं। साधारण क्षणोंमें हम चित्त की गहराअियोंको नहीं देख पाते हैं। साधारण क्षणोमें हम साधारण जीते हैं हम असाधारण क्षणों में हमारे मनमें जो गहरे से गहरा छिपा है वह प्रगट होना शुरु हो जाता है।

अर्जुनको दिखाई पडा, मेरे लोग। युद्ध की सन्निकटता में बस अब युद्ध शुरू होनेको है तब अुसे दिखाई पडा मेरे

लोग। काश, अर्जुनने कहा होता युद्ध व्यर्थ है, हिंसा व्यर्थ है, तो गीता की किताब निमित्त नहीं होती, पर अुसने कहा अपने ही लोग इकट्ठे हैं अुनके काटने के विचार से ही मेरे अंग शिथिल हुअे जाते हैं असल में जिसने जीवन के भवन को अपनों के ऊपर बनाया है अुन्हें काटते क्षण में अुसके अंग शिथिल हो यह बिलकुल स्वाभाविक है। पडोस में होती मृत्यु मनको छूती नहीं कहते है बेचारा मर गया, घर में होती है तब इतना कह नहीं निपट जाता, तब छूती है क्योंकि तब घरसे होती है।

अपना कोई मरता है तब हम भी मरते हैं हमारा भी एक हिस्सा मरता है, हमारा भी एक अंग है। आदमी था हम भी उसमें कुछ लगाये थे। उसकी जिन्दगी से हमें भी कुछ मिलता था। हमारे मनके किसी कोने को उस आदमी ने भरा था, पत्नी मरती है तो पत्नी ही नहीं मरती, पति भी मरता है सच तो यह है कि पत्नी के साथ ही पति पैदा हुआ था उसके पहले नहीं था। पत्नी मरती है तो पति भी मरता है। बेटा मरता है तो माँ भी मरती है क्योंकि बेटे के पहले माँ नहीं थी, माँ बेटे के जन्म के साथ ही हुई थी। जब बेटा जन्मता है, तो एक तरफ जन्मता है, दूसरी तरफ माँ भी जन्मती है और जब बेटा मरता है तो एक तरफ बेटा मरता है दूसरी तरफ माँ भी मरती है। जिसे हमने अपना कहा उससे हम जुडे हैं, हम भी मरते हैं।

अर्जुन ने जब देखा कि अपने ही सब इकट्ठे हैं तो अर्जुन को अगर अपना ही आत्मघात की सम्भावना से उसे लगा कि सब सब अपने मर जाय तो मैं बचूँगा कहाँ।

हमारा मैं हमारा अपनों का जोड़ का नाम है जिसे मैं कहता है वह मेरोंका जोड का नाम है। अगर मेरे सब बिदा हो जाय तो

मैं खो जाऊँगा। मैं बच नहीं सकता यह मेरा, मैं कुछ मेरे पितासे कुछ मेरे माँ से, कुछ मेरे बेटेसे, कुछ मेरे मित्र से इन सबसे जुड़ा है। आश्चर्य तो यह है जिन्हें हम अपने कहते हैं उनसे ही नहीं जुड़ा। जिन्हें हम पराये कहते हैं उनसे भी जुड़ा। परिधि के बाहर पर उनसे भी जुडा है। जब मेरा शत्रु मरता है तो तब भी थोड़ा मैं मरता हूँ क्योंकि मैं वह नहीं हो सकूँगा जो मेरे शत्रु के होने पर था। शत्रु भी मेरी जिन्दगीको कुछ देता था। मेरा शत्रु उससे भी मेरे-मैं का सम्बन्ध था उसके बिना मैं फिर अधूरा और खाली हो जाऊँगा।

अर्जुनको दूसरों का घात होगा ऐसा दिखाई पड़ता तो बात और थी। अर्जुन को बहुत गहरेमें दिखाई पड़ा। यह तो मैं अपने ही आत्महत्या करने को उत्सुक हुआ हूँ। यह तो मैं ही मरूँगा। मेरे मर जायेंगे तो मेरे होने का क्या अर्थ होगा? जब मेरे ही न होंगे तो मुझे सब मिल जाय तो भी व्यर्थ हैं यह भी थोड़ा सोचने जैसा है। हम अपने लिए जो कुछ इकट्ठा करते हैं वह अपने लिए कम, अपनों के लिए ज्यादा होता है।

जो मकान हम बनाते हैं वह अपने लिए कम अपनों के लिए ज्यादा होता है। उन अपनोंके लिए जो साथ रहेंगे जो देखेंगे और प्रशंसा करेंगे और उन पराये अपनों के लिए भी जलेंगे और इर्ष्यासे मरेंगे। अगर इस पृथ्वीपर सबसे श्रेष्ठ भवन भी मेरे पास रह जाय और अपने न रह जाय मित्र भी नहीं शत्रु भी नहीं तो अचानक मैं पाऊँगा वह भवन झोंपडी से भी बदतर हो गया। क्योंकि वह भवन एक दिखावा था क्योंकि उस भवनके माध्यम से मैं अपनों को परायों को मैं प्रभावित कर रहा था। वह भवन तो सिर्फ प्रभावित करने की व्यवस्था थी अब मैं किसे प्रभावित करूं?

आप जो कपड़े पहनते हैं वह अपने शरीर को ढकने को कम

दूसरों की आँखों को झपकने को ज्यादा। अकेलेमें सब बेइमानी हो जाता है। आप सिंहासनोंपर चढ़ते हैं वह सिंहासनोंपर बैठने के आनन्द के लिए कम क्योंकि कोई सिंहासनपर बैठ कर कभी किसी आनन्द को उपलब्ध नहीं हुआ है पर अपनों और परायों जो हम सिंहासनोंपर चढ़के जो करिश्मा जो चमत्कार कर पाते हैं उसके लिए ज्यादा। सिंहासनपर बैठे आप रह जाय और नीचे से लोग खो जाये अचानक आप पायेंगे सिंहासन पर बैठे होना हास्यास्पद हो गया है, उतर आयेंगे, फिर शायद दुबारा नहीं चढेंगे।

अर्जुन को लगा उस क्षणमें कि अपने ही अिकट्ठे हैं दोनों तरफ, मरेंगे अपने ही, अगर जीत भी गया तो जीतका प्रयोजन क्या है? जीत के लिए जीत नहीं चाही जाती, जीत रस है अपने और परायों के बीच जो अहंकार भरेगा उसका साम्राज्य मिलेगा, क्या होगा अर्थ, कोई अर्थ नहीं होगा।

यह जो अर्जुन के मनमें विषाद घिर गया अिसे ठीकसे समझ लेना चाहिअे। यह विषाद ममत्व का है। यह विषाद हिंसक चित्त का है। और अिस विषाद के कारण ही कृष्ण को इतने धके देने पडे अर्जुन को। अर्जुन की जगह महावीर जैसा व्यक्ति होता तो बात उसी वक्त खतम हो जाती। यह बात आगे नहीं चल सकती अगर महावीर जैसा व्यक्ति होता तो शायद यह बात उठ भी नहीं सकती थी।

महावीर जैसा व्यक्ति होता ता कृष्ण एक शब्द भी उस व्यक्तिसे नहीं बोले होते। बोलने का कोई अर्थ न था बात समाप्त हो गयी होती। यह गीता कृष्ण ने कही कम, अर्जुन ने कहलवायी ज्यादा है। इसका असली लेखक कृष्ण नहीं है, असली लेखक अर्जुन है। अर्जुन की यह चित्तदशा आधार बनी है और कृष्ण को

साफ दिखाई पड रहा है कि हिंसक अपनी हिंसा के पूरे दर्शन को उपलब्ध हो गया है और अब हिंसा से भागने की जो बातें कर रहा है उसका कारण भी हिंसक चित्त ही है।

अर्जुन की दुविधा अहिंसक की हिंसा से भागने की दुविधा नहीं है। अर्जुनकी दुविधा हिंसक की हिंसा से ही भागने की दुविधा है। अिस सत्यको ठीकसे समझ लेना जरुरी है। यह ममत्व हिंसा ही है लेकिन गहरी हिंसा है दिखाई नहीं पडती। जब मैं किसी को कहता हूँ 'मेरा' तो 'पजेशन' शुरू हो गया मालकियत शुरू हो गयी।

मालकियत हिंसा का रुप है। पति पत्नी से कहता है 'मेरी' मालकियत शुरु हो गयी। पत्नी पति से कहती है 'मेरा' मालकियत शुरू हो गयी, और जब भी हम किसी व्यक्ति के मालिक हो जाते हैं तभी हम उस व्यक्ति की आत्मा का हनन करते हैं, हमने मार डाला उसे। हमने तोड डाला उसे, असल में हम उस व्यक्ति के साथ व्यक्ति की तरह नहीं, वस्तु की तरह व्यवहार कर रहे हैं। अब कुर्सी मेरी जिस अर्थ में होती है, उस अर्थ में पत्नी मेरी हो जाती है। मकान मेरा जिस अर्थ में होता है उस अर्थ में पति मेरा हो जाता है। स्वभावतः इसलिए जहां जहां मेरे का सम्बन्ध है वहाँ प्रेम फलित नहीं होता सिर्फ कलह ही फलित होती है।

इस दुनिया में जब तक पति पत्नी मेरे का दावा करेंगे, तब तक दुनियामें पति-पत्नी के बीच बाप बेटे के बीच कलह ही चल सकती है। मैत्री नहीं हो सकती है। मेरे का दावा मैत्री का विनाश है, मेरे का दावा चीजोंको उलटा ही कर देता है सब हिंसा हो जाती है।

मैंने सुना है एक आदमी ने शादी की, लेकिन पत्नी बहुत पढ़ी लिखी नहीं, मनमें बड़ी इच्छा है पत्नी कभी पत्र लिखें। घर से बाहर पति गया है तो समझा कर गया है कि क्या क्या लिखना। सभी पति पत्नी एक दूसरे को समझा रहे हैं क्या क्या लिखना? तो उसने समझाया है कि उपर लिखना कि 'प्राणोंसे प्यारे', कभी ऐसा होता नहीं, नीचे लिखना 'चरणों की दासी' पत्नी का पत्र तो मिला लेकिन कुछ भूल हो गयी। उसने उपर लिखा 'चरणों के दास' और नीचे लिखा 'प्राणोंकी प्यासी' जो नहीं लिखते उनकी स्थिति भी ऐसी ही है। जो बिलकुल ठीक ठीक लिखते हैं उनकी भी स्थिति ऐसी ही है। जहाँ आग्रह है मालकियत का वहाँ हम सिर्फ धृणा ही पैदा करेंगे और जहाँ घृणा है वहाँ हिंसा आयेगी।

इसलिए हमारे सब सम्बन्ध हिंसा के सम्बन्ध हैं। हमारा परिवार का सम्बन्ध हो के रह गया है। यह जो अर्जुनने देखा मेरे सब मिट जायेंगे तो मैं कहाँ और मेरे को मिटाकर जीतका साम्राज्य का क्या अर्थ? वह अहिंसक नहीं हो गया है। अहिंसक होता तो कृष्ण आशीर्वाद देते। और कहते विदा हो जाओ, बात समाप्त हो गयी। लेकिन कृष्ण देख रहे हैं कि हिंसक तो वह पूरा है। मैं और ममत्व की बात कर रहा है इसलिए अहिंसा झूठी है। जो मैं की बात कर रहा हो,और अहिंसा की बात कर रहा हो तो जानना कि अहिंसा झूठी है। क्योंकि मैं के आधार पर अहिंसा के फूल खिलते नहीं। मेरे के आधार पर अहिंसा के जीवनका कोई विकास ही नहीं होता।

प्रश्न :—आचार्यश्री अर्जुन युद्ध भूमि पर गया, उसने स्वजन और मित्रोंका देखा, उसे विषाद हुआ, वह शोकसे भर गया। उसका चित्त हिंसक था। युद्धभूमि में दुर्योधन था युधिष्ठिर भी थे द्रोणाचार्य भी थे अर भी बहुत योद्धा थे। उनके भी स्वजन मित्र थे, उनका भी चित्त हिंसक था। ममत्व से भरा था। अर्जुन को ही सिर्फ विषाद क्यों हुआ?

उत्तर :—निश्चय ही, दुर्योधन भी वहाँ था और भी योद्धे वहाँ थे उन्हें क्यों विषाद नहीं हुआ, वे भी ममत्वसे भरे लोग थे वे भी हिंसा से भरे लोग थे। नहीं हुआ कारण है हिंसा भी अन्धी हो सकती है विचारहीन हो सकती हैं ममत्व भी अन्धी हों सकती है। हिंसा भी आँखवाली हो सकती है। विचारपूर्ण हो सकती है।

ममत्व भी विचारपूर्ण हो सकता है। सुबह मैंने कहा था कि अर्जुन की कठिनाई यही है कि वह विचार हीन नहीं है। विचार है और विचार दुविधा में डालता है। विचारने उसे दुविधामें डाला दुर्योधन को भी दिखाई पड़ रहा है लेकिन हिंसा इतनी अन्धी है कि यह नहीं देख पायेगा दुर्योधन कि इस हिंसा के पीछे मैं उन सबको मार डालूँगा जिनके बिना हिंसा भी व्यर्थ हो जाती है अन्धेपन में यह दिखाई नहीं पड़ेगा।

अर्जुन उतना अन्धा नहीं है। इसलिए अर्जुन युद्ध के स्थलपर विशेष इस अर्थमें है कि जीवनकी तैयारी उसकी वही है जो दुर्योधन की है लेकिन मन की तैयारी उसकी भिन्न है। मनमें उसके विचार हैं संदेह हैं। मनमें उसके शक है, वह पूछ सकता है वह प्रश्न उठा सकता है और जिज्ञासा का बुनियादी सूत्र उसके पास है। और सबसे बड़े प्रश्न वे नहीं हैं जो हम जगत के सम्बन्धमें उठाते हैं।

सबसे बडे प्रश्न वे नहीं हैं जो हम पूछते हैं किसने जगत बनाया। हम पूछते हैं कि ईश्वर है या नहीं? सबसे बडे प्रश्न वे हैं जो हमारे मनके ही द्वन्द्वसे जन्मते हैं। लेकिन अपने ही मनके द्वन्द्वको देखने के लिए विचार चाहिअे, चिन्तन चाहिअे मनन चाहिअे। अर्जुन देख पा रहा है, सोच पा रहा है कि मैं जो हिंसा करने

जा रहा हूँ उसमें वे ही लोग मर जायेंगे जिनके लिए हिंसा करने का कुछ अर्थ हो सकता । अन्धा नहीं और यह अन्धा न होना ही उसका कष्ट भी है सौभाग्य भी है इसे समझ लेना उचित है। अन्धा नहीं है यह उसका कष्ट है। दुर्योधन कष्ट में नहीं है।

दुर्योधन के लिए युद्ध एक रस है। अर्जुन के लिए युद्ध एक संकट और कष्ट हो गया है। सौभाग्य भी यही है यदि वह इस कष्ट को पार हो जाता तो निर्विचार में पहुँच सकेगा। यदि वह इस कष्ट को पार हो जाता है परमात्मा में समर्पण को पहुँच सकेगा। अगर वह इस कष्ट को पार हो जाता है तो ममत्व को छोडने में पहुँच सकेगा। अगर वह इस संकट को पार नहीं हो पाता है तो निश्चित ही यह युद्ध उसके लिए विकट संकट हो जायेगा। जिसमें उसका वो व्यक्तित्व दो खण्डों में टूट जायेगा या तो भाग जायेगा या लडेगा बेमन से। हार जायेगा। जो लड़ाई बेमन से लड़ी जाय वह हारी ही जानेवाली है। क्योंकि बेमन से लड़ने का मतलब है आधा मन भाग रहा है। आधा मन लड़ रहा है।

जो आदमी अपने ही भीतर विपरीत दिशाओंमें गति कर रहा हो उसकी पराजय निश्चित है। दुर्योधन जीतेगा फिर पूरे मनसे लड़ रहा है। कूओ में भी गिर रहा है तो पूरे मनसे। अन्धकार में भी जा रहा है तो पूरे मनसे जा रहा है। अन्धकार में दो ही व्यक्ति पूरे मन से जा सकते हैं एक तो वह जो अन्धा है क्यों कि उसे अन्धकार और प्रकाशमें कोई अन्तर नहीं पड़ता। एक वह जिसके पास आत्मिक प्रकाश है क्योंकि तब अन्धकार को उसका होना ही अन्धकार को मिटा देता है।

अर्जुन या तो दुर्योधन जैसा हो जाय, नीचे गिर जाय विचार

से, विचार हीनता में गिर जाय में चला जायेगा या कृष्ण जैसा हो जाय विचार से निर्विचार में पहुंच जाय इतना ज्योतिर्मय हो जाय इतना ज्योतिसे भर जाय भीतरी, कि देख पाए कौन मरता है कौन मारा जाता है देख पाए कि यह सब जो हो रहा है स्वप्नसे ज्यादा नहीं है या तो इतने बडे सत्य को देख पाये तो युद्ध में जा सकता है या इतने बड़े असत्य को देख पाये कि हम उनको ही मारकर आनन्द को उपलब्ध हो जायेंगे जिनके लिए मारने की चेष्टा कर रहे हैं। या तो दुर्योधन की असत्य में उतर जाय तो अर्जुन निश्चित हो जायेगा या कृष्ण के सत्य में पहुंच जाय तो अर्जुन निश्चित हो जायेगा। अर्जुन एक तनाव है।

नीत्से ने कहीं कहा है कि आदमी एक सेतु है एक ब्रीज है दो अलग अलग किनारों जोड़ता हुआ। आदमी एक तनाव है या तो पशु हो जाय तो सुख पा ले या परमात्मा हो जाय तो आनन्द का पा ले। पर जबतक आदमी है तबतक सुख भी नहीं पा सकता, आनन्द भी नहीं पा सकता। सुख और आनन्द के बीच सिर्फ खींच सकता तनाव भर हो सकता है। इसलिए हम दोनों काम करते हैं जीवनमें। शराब पीके पशु हो जाते हैं थोड़ा सुख मिलता है। सेक्स में थोड़ा सुख मिलता है पशुमें वापस उतर जाते हैं। नीचे गीर जाते हैं विचार से तो थोड़ा सुख मिलता है। दुनियामें शराब जितना ज्यादा आकर्षण किसी और कारण से नहीं है। शराब हमें वापिस पशु में पहुंचा देने की सुविधा बन जाती है। नशा करके हम वही हो जाते हैं जहाँ सभी पशु हैं। फिर हम पशु जैसे निश्चित। क्योंकि पशु कोई चिन्ता नहीं करता। कोई पशु पागल नहीं होता। सिर्फ सर्कस का पशु पागल होता है क्योंकि सर्कस का पशु करीब करीब आदमी की हालतमें आ जाता है।

आदमी करीब करीब सर्कस के पशु की हालतमें है। कोई पशु

पागल नहीं होता। और किसी पशुके लिए विक्षिप्तता, चिन्ता, अनिद्रा बीमारियां नहीं आतीं। कोई पशु आत्मघात नहीं करता [स्यूसाइड] नहीं करता। क्योंकि आत्मघात के लिए बहुत चिन्ता हो जानी अनिवार्य है। बडे मजे की बात है कोई पशु बर्डन अनुभव नहीं करता वह कभी भी उबता नहीं। एक भैंस वह रोज वही घास चर रही है, चरती रहेगी वह कभी उबती नहीं। उबने का कोई सवाल नहीं। उबने के लिअे विचार चाहिअे। बर्डन के लिए उबने के लिए विचार चाहिअे इसलिए मनुष्य में जो जितना ज्यादा विचारशील है वह उतना उबेगा, मनुष्य में जो जितना ज्यादा विचारशील है वह उतना चिन्ता से भर जायेगा। मनुष्य जो जितना ज्यादा विचारशील है वह पागल हो सकता है। जितना ज्यादा विचारशील है वह विक्षिप्त हो सकता है। लेकिन यह एक ही पहलू है। दूसरा पहलू यह है कि जो विक्षित होने की स्थिति को पार कर जाय वह विमुक्त भी हो सकता है। और जो चिन्ता को पार कर जाय वह निश्चिन्तता के सहज आनन्द को उपलब्ध हो सकता है। और जो तनाव को पार कर जाय वह विश्रान्ति के उस अनुभव को पा सकता है जो सिर्फ परमात्मा में विश्राम से उपलब्ध होती है।

अर्जुन मनुष्य का प्रतीक, दुर्योधन पशु का प्रतीक, कृष्ण परमात्मा का प्रतीक। यहाँ तीन प्रतीक हैं। उस युद्ध स्थल में अर्जुन डांवाडोल है। वह दुर्योधन और कृष्ण के बीच डाँवाडोल है। उसे निश्चिन्तता मिल सकती है अगर वह दुर्योधन हो जाय। अगर वह कृष्ण हो जाय। अर्जुन रहते कोई सुविधा नहीं है। अर्जुन रहते कोई तनाव है। अर्जुन रहते कोई मुश्किल है। उसकी मुश्किल यही है कि दुर्योधन हो नहीं सकता। कृष्ण होना समझ में नहीं आता और जो है वहाँ टिक नहीं सकता क्योंकि वह ब्रीज का तरंग भर है। वहां टिका नहीं जा सकता। कोई भी

सेतु मकान बनाने के लिए नहीं होता।

अकबर ने फतेहपुर सीकरी बनायी। वहाँ एक ब्रीजपर एक वाक्य लिखवाया "सेतु पार करनेको है, सेतु निवास के लिए नहीं" ठीक लिखा है जो भी आदमी सेतु पर निवास बनायेगा वह मुश्किलमें पड़ जायेगा। कहीं भी लौट जाय। पशु हो जाय या परमात्मा हो जाय आदमी नियति नहीं है। आदमी होना संकट है।

आदमी अन्त नहीं है। अगर हम ठीक से समझे तो पशु है और न परमात्मा। न तो वह पशु को पाता है क्योंकि पशु को पार कर चुका और न तो वह परमात्मा हो पाता क्योंकि परमात्मा को पहुंचना है। मनुष्य सिर्फ परमात्मा और पशु के बीच डोलता हुआ अस्तित्व है। हम २४ घंटे में कई बार दोनों कोनोंपर पहुंच जाते हैं। क्रोध में वही आदमी पशु के निकट आ जाता है। शान्तिमें वही आदमी परमात्मा के निकट पहुंच जाता है।

हम दिन में २४ घंटेमें बहुतबार नर्क और स्वर्ग की यात्राअें कर लेते हैं। क्षणमें स्वर्ग में होते हैं क्षणमें नर्क में उतर जाते हैं। नर्क में पछताते हैं। फिर स्वर्ग की चेष्टा शुरू हो जाती है। स्वर्ग में पैर जमा नहीं पाते कि फिर नर्क में पहुँचना शुरू हो जाता है और तनाव का एक नियम है कि तनाव विपरितमें आकर्षण पैदा कर देता है। जैसे घडी का पेंडलम होता है वह बायीं तरफ जाता है। जब बायीं तरफ जाता है तब हमें लगता है कि वह बायीं तरफ जा रहा है। पर जो घडी में विज्ञान को समजतें हैं वे यह भी जानते हैं कि वह बायीं तरफ जाते समय दायीं तरफ जानेकी शक्ति इकट्ठी कर रहा है। वह जितनी दूर बायीं तरफ जायेगा वह उतनी ही दूर दायीं तरफ जानेकी ताकात इकट्ठी कर

रहा है। असल में वह बायीं तरफ इसलिए जा रहा है कि वह दायीं तरफ जा सके और दायीं तरफ अिसीलिए जा रहा है कि वह बायीं तरफ जा सके।

आदमी पूरे समय परमात्मा और पशु के बीच पेडुंलम की तरह घूम रहा है। अर्जुन आदमी का प्रतीक है और आज के आदमी का तो और भी ज्यादा। आज के आदमी की चेतना ठीक अर्जुन की चेतना है। अिसलिए दुनिया में दोनों बातें एक साथ हैं एक ओर मनुष्य अपनी चेतना को समाधि की ओर ले जाने के लिए आतुर है। और दूसरी तरफ आदमी एल एस डी से मेस्कलिन से, मेरिजुआना से, शराब से, सेक्स से, पशु की तरफ ले जाने को आतुर है। और अक्सर ऐसा होगा कि एक ही आदमी यह दोनों काम करता हुआ मालूम पडेगा। वही आदमी भारत की यात्रा पर आयेगा वही आदमी अमेरिका मे बीज लेता रहेगा। वह दोनों एक साथ करता रहेगा।

मनुष्य बेहोश हो जाय तो पशु हो सकता है लेकिन बेहोश ज्यादा देर नहीं रहा जा सकता। बेहोशी के सुख भी होशमें ही अनुभूत हो पाते हैं। बेहोशी में बेहोशी का सुख भी अनुभव नहीं हो पाता। शराब का भी मजा जब शराब पीये होना है आदमी तब नहीं चलता, पता तो तभी चलता है, जब शराब का नशा उतर जाता है। नींद में जब आप होते हैं तब नींद का कोई मजा पता नहीं चलता वह सुबह जाग के चलता है। बडी आनन्दपूर्ण निद्रा थी। बेहोशी के सुख के लिए होशमें आना जरुरी है। होश में कोई सुख नहीं मालूम पडता इसलिए बेहोशी में उतरना पड़ता है।

अर्जुन मनुष्य की चेतना है। इसलिए अद्‌भुत है गीता। इसलिए अद्‌भुत है कि वह मनुष्य के बहुत आन्तरिक मनस स्थिति

का आधार है। मनुष्य की आन्तरिक मनस स्थिति अर्जुन साथ कृष्ण का तो संघर्ष है पूरे समय वह जो अर्जुनके साथ कृष्ण का जो संवाद या जो विवाद है वह जो अर्जुन को खींच खींचकर परमात्माकी तरफ लानेकी चेष्टा है। और अर्जुन वापस शिथिल गात्र होकर बैठ जाता है। वह फिर पशुमें गीरना चाहता है।

यह जो संघर्ष है वह अर्जुन के लिए है दुर्योधन के लिए नहीं है। दुर्योधन निश्चित है। अर्जुन भी वैसा हो तो निश्चित हो सकता है, वैसा नहा है। हममें भी जो दुर्योधन की तरह हैं निश्चित हैं। वे मकान बना रहा है। वे दिल्लीमें राजधानी के सिंहासन चढ़ रहे हैं। वे धन कमा रहे हैं। हममें जो अर्जुन की तरह हैं वे बेचैन और परेशान हैं। बेचैन हैं, इसलिए कि जहाँ हैं वह जगह घर बनाने योग्य नहीं मालूम पड़ती। जहाँ से आ गये हैं वहां से आगे बढ़ गये हैं जिससे लौटना संभव नहीं है। जहां पहुँचे नहीं हैं उसका कोई पता नहीं हैं कि वह कहाँ है मार्ग, वह मंदिर कहां है इसका कोई पता नहीं।

धार्मिक आदमी स्वभावतः संकटग्रस्त होता है अधार्मिक आदमी [क्राइसीस] नहीं होता। मंदिरोंमें बठा आदमी ज्यादा चिन्तित दिखाई पड़ेगा, बजाय कारागृहमें बैठा वे आदमी के। कारागृहमें बैठा आदमी इतना चिन्तित नहीं मालूम पड़ता। निश्चित उतने एक किनारेपर वह है। वह सेतुपर नहीं है। एक अर्थमें वह सौभाग्यशाली मालूम पड़ सकता है, इर्ष्यायोग्य। कितना निश्चित ! लेकिन उसका सौभाग्य बड़े गहरे अभिशाप को छुपाये है वह इसी तट पर रह जायेगा। उसमें अभी मनुष्य की किरण भी पैदा नहीं हुआ। मनुष्य के साथ ही उपद्रव शुरू होता है। मनुष्य साथ ही, संताप शुरू होता है क्योंकि मनुष्य के साथ ही परमात्मा होने की संभावना हैं (पासिबिलीटी) के द्वार खुलते हैं। अर्जुन पशु होना नहीं चाहता।

स्थिति पशु होने की है। परमात्मा होने का उसे पता नहीं है। बहुत गहरे अनजानमें आकांक्षा परमात्मा होने की ही है। इसलिए वह पूछ रहा है अिसलिए प्रश्न पूछ रहा है इसलिए जिज्ञासा जग रहा है।

जिसके जीवनमें प्रश्न है जिसके जीवनमें जिज्ञासा है, जिसके जीवनमें असंतोष है उसके जीवनमें धर्म आ सकता है। जिसके जीवनमें नहीं चिन्ता, नहीं प्रश्न, नही संदेह, नहां जिज्ञासा, नहीं असंतोष उसके जीवनमें धर्म के आने की कोई सुविधा नहीं है। जो बीज टूटेगा अंकुरित होने को चिन्तामें पड़ेगा। बीज बहुत मजबूत चीज है। अंकुर बहुत कमजोर होता है। बीज बड़ा निश्चयी होता है अंकुर बड़ी चिन्तामें पड़ जाता है। अंकुर निकलता है जमीनसे पत्थरों को तोड़कर। अंकुर जैसी कमजोर चीज पत्थरों को तोड़कर मिट्टी को काटकर बाहर निकलता है, अज्ञात अनजाने जगतमें। जिसका कोई परिचय नहीं पहचान नहीं। कोई बच्चा तोड डालेगा कोई पशु चर जायेगा किसीके पैर के नीचे दवेगा, क्या होगा क्या नहीं होगा, बीज अपनेमें रहे तो वहुत निश्चित है न किसी बच्चे के पैर के नीचे दवेगा न कोई अज्ञात के खतरे में अपने में बन्द।

दुर्योधन बीजमें बन्द जैसा व्यक्ति है। निश्चित है। अर्जुन अंकुरित है अंकुर चिन्तित है अंकुर वेचैन है। क्या होगा फूल आयेंगे कि नहीं अब वीज होना छोड़ दिया। अब फूल आयेंगे कि नहीं ? फूल के लिए आतुर वढ़ने के लिए आतुर है। वही आतुरता उसे कृष्णसे निरन्तर प्रश्न पुछवाये चली जाती है। इसलिए अर्जुन के मनमें प्रश्न है चिन्ता है। दुर्योधन के मन में नहीं है।

प्रश्न-आचार्यश्री, कृपया यह बतलाइए कि मनुष्यके सामने

द्वन्द्वात्मक दशा बारबार आती रहती है, उस द्वन्द्व भरी दशा को पार होने के लिए मूल आधार कौनसा होना चाहिअे ? और द्वन्द्वभरी दशा को विकास पोषक किस तरह बना सकें ? और जो द्वन्द्वदशा होती है उसमें से हमने हमारा संकल्प निश्चय कर लिया उसकी भूल चीज कौन सी होती है ?

उत्तर-अर्जुन के लिये भी यही सवाल है इस सवाल को आमतौर से आदमी जैसा हल करता है वैसा ही अर्जुन भी करना चाहता है। द्वन्द्व मनुष्य का स्वभाव है, मनुष्यका आत्माका नहीं, शरीर का नहीं, मनुष्य का द्वन्द्व स्वभाव है। द्वन्द्व को अगर जल्दी-बाजीसे हल करने की कोशिश की तो पशु की तरफ लौटा जाना रास्ता है। शीध्रता की तो पीछे की ओर लौट जाये। वह परिचित रास्ता है। वहाँ वापिस जाया जा सकता है द्वन्द्व से गुजरना ही तपश्चर्या है। धैर्य से द्वन्द्व को झेल लेना तपश्चर्या है और द्वन्द्वका झेल कर ही व्यक्ति द्वन्द्व से पार होता है। इसलिए कोई जलदी से निश्चय कर ले, सिर्फ द्वन्द्व को मिटाने के लिए तो उसके निश्चय कामके नहीं है। वह नीचे गिर जायेगा। वह वापिस लौट जायेगा।

पशु बहुत निश्चयात्मक है पशुओंमें शंका नहीं है। वे बडे निश्चयमें जी रहे हैं बड़े विश्वासमें, वडे आस्तिक माल्र्भ पड़ते हैं। पर उन की आस्तिकता आस्तिकता नहीं है। क्योंकि जिन्होंने नास्तिकता नहीं जानी उसकी आस्तिकता का अर्थ कितना है ? और जिसने 'नहीं' कहनेका कष्ट नहीं, जाना वहाँ 'हां' कहने के आनन्दका उपलब्ध नहीं हो सकता है। और जिसने संदेह नहीं किया उसकी श्रद्धा दो कौड़ी की है। लेकिन जिसने संदेह किया और जो संदेह को जीता और संदेहको पार हो गया उसकी श्रद्धा का कुछ बल है उसकी श्रद्धा की कोई प्रामाणिकता है।

तो एक तो यह रास्ता है जल्दी कोई निश्चय कर लें। और निश्चय करने के बहुत रास्ते आदमी पकड़ लेता है। किसी शास्त्रका पकड़ ले तो निश्चय हो जायेगा। शास्त्र निश्चय की भाषामें बोलेगा कि ऐसा ऐसा करो और विश्वास करो। जिसने शास्त्र पकड़े कि, निश्चय उस आदमी ने अपने मनुष्य होने का इन्कार किया। एक अवसर मिला था विकास का उसने खो दिया। गुरुको पकड लो जिसने गुरुको पकड़ लिया उसने अवसर खो दिया। अेक संकट था जिसमें बेसहारा गुजरने के लिए परमात्माने उसे छोड़ा था, उसने संकट से बचाव कर लिया। वह संकटसे बिना गुजरे रह गया, और आगमें गुजरता तो सोना निखरता वह आगसे गुजरा ही नहीं वह गुरुकी आड़में हो गया तो सोना निखरेगा भी नहीं। निश्चय करनेका आपसे नहीं कहता आप निश्चय करेंगे कैसे, जो आदमी द्वन्द्व में है उसका निश्चय भी द्वन्द्वसे भरा होगा। द्वन्द्व से भरा आदमी निश्चय नहीं कर सकता। करना भी नहीं चाहिअे। द्वन्द्व को जीये, द्वन्द्वमें तपे, द्वन्द्वमें खपे, द्वन्द्वमें मरे, द्वन्द्व को भागे, द्वन्द्व की आग से भागे मत, क्योंकि जो आग दिखाई पड रही है उसीमें कचरा जलेगा और सोना बचेगा। द्वन्द्वसे गुजरे, द्वन्द्वका निर्यात समझें। वह मनुष्यका भाग्य है उससे गुजरना ही होगा। उसमें जीये, जलदी न करें। निश्चय के लिए जलदी न करें। द्वन्द्वसे गुजरे तो निश्चय आयेगा। द्वन्द्वसे गुजरे तो श्रद्धा आयेगी। श्रद्धा लानी नहीं पड़ेगी, लायी गयी श्रद्धा को कोई भी मूल्य नहीं, क्योंकि श्रद्धा लानी पड़ी उसका मतलब ही यह है कि अभी आने के योग्य मन नहीं बना था जल्दी ले आये।

जो श्रद्धा बनानी पड़ी है उसका अर्थ ही यह है कि पीछे द्वन्द्वग्रस्त मन है। वह भीतर जिन्दा रहेगा। उपर से परत श्रद्धा की हो जायेगी। वह उपर उपर काम देगी। समयपर काम नही देगी, जब कठिन समय होगा मौत सामने खडी होगी। तब

बहुत पक्का विश्वास कर लिया था कि आत्मा अमर है जब गीता पढते थे तब पक्का विश्वास रहा था। जब रोज मन्दिर जाते थे तब पक्का विश्वास था कि आत्मा अमर है और जब डोकटर पास खडा हो जायेगा तो उसका चेहरा उदास दिखाई देगा और घर के लोग भागने दौडने लगेंगे और नाडी की गति गीरने लगेगी तब पता चलेगा कि पता नहीं कि आत्मा अमर है या नहीं। क्योंकि लाख कहे गीता ये उनके कहने से आत्मा अमर नहीं हो सकती। आत्मा अमर है इसलिए वह कहते हैं यह दूसरी बात है लेकिन उनके कहने से आत्मा अमर नहीं हो सकती। हाँ आप किसी को मानलें इससे कुछ होने वाला नहीं है। द्वन्द्वसे गुजरें पीडा को झेलें, वह अवसर है उससे बचने की कोशिश मत करें।

अर्जुन भी बचने की कोशिश कर रहा है लेकिन कृष्ण उसे बचाने की कोशिश नहीं कर रहे हैं वह पूरे द्वन्द्वको खींचते हैं। अन्यथा कृष्ण कहते बेफिक्र रहो मैं सब जानता हूँ, वेकार की बात-चीत मत कर, मुझमें श्रद्धा रख और कूद जा ऐसा भी कह सकते थे। इतनी लम्बी गीता कहने की जरूरत न थी। इतनी लम्बी गीता अर्जुन के द्वन्द्व के प्रति बड़ा सन्मान है और मजा है। अर्जुन बार बार वही पूछता है और कृष्ण यह नहीं कहते कि यह तो तू पूछ चूका है। फिर वही पूछता है, फिर वही पूछता है। सारा का सारा पूरे के पूरे प्रश्न अर्जुन के अलग अलग नहीं है। सिर्फ शब्दावली अलग है। बात वही वह पूछ रहा है। उसका द्वन्द्व बार बार लौट आ रहा है। कृष्ण उसे यह नहीं कहते चूप! अश्रद्धा करता है चूप अविश्वास करता है। उसका द्वन्द्व ही बार बार नये रूप लेकर खड़ा होता है। कृष्ण उसे विश्वास दिलानेमें उत्सुक नहीं है। और कृष्ण उसे श्रद्धा तक पहुँचानेमें जरूर उत्सुक है। और विश्वास और श्रद्धा में बड़ा फर्क है। विश्वास वह है कि जो हम संदेह हल किये बिना उपरसे आरोपित कर लेते हैं। श्रद्धा है वह जो

संदेह के गिर जानेसे फलित होती है श्रद्धा संदेहकी ही यात्रा से मिली मंजिल है। विश्वास संदेहके भय से पकड़ लिये गये अन्धे आधार हैं। मैं कहूँगा जीयें द्वन्द्व को, तीव्रता से जीयें। धीरे धीरे जीयेंगे तो बहुत समय लगेगा। कुनकुनी आँचमें डाल दें सोने को तो निखरनेमें सोने को जन्म लग सकता है। तीव्रतासे जीये।

द्वन्द्व मनुष्य का अनिवार्य परीक्षण है जिससे वह परमात्मा तक पहुँचने की योग्यता का निर्णय दे देता है। जीयें भागें मत। [इस्केप] मत करें [कन्सोल्यूशन] सांत्वनाऐं मत बनाऐं जानें कि यही है नियति, द्वन्द्व है, अिसके परिणाम ? लडें तीव्रतासे, उतरे इस द्वन्द्वमें। क्या होंगे अिसके परिणाम ? इसके दो परिणाम होंगे। जैसे ही कोई व्यक्ति अपने चित्तके द्वन्द्वमें पूरी तरह उतरने को राजी होता है वैसे ही उस व्यक्तिके भीतर तीसरा बिंदु पैदा हो जाता है। दो के अलावा एक और तीसरे की ताकत भी पैदा होती है। जैसे ही कोई व्यक्ति अपने द्वन्द्वको जीनेके लिए राजी होता है वैसे ही उसके भीतर दो नहीं तीन शुरू हो जाते हैं वह जी निर्णय करती है कि जियेंगे द्वन्द्वको वह द्वन्द्व से बाहर है वह द्वन्द्वके भीतर नहीं हैं।

मैंने सूना है, संत तेरासा इसाई फकीर हुअे थे। पैसे नहीं थे फिरभी बड़ा चर्च बनानेका अुनका खयाल था। उसने अपना भिक्षापात्र दिखाया, उसमें तीन पैसे थे। लोगों ने कहा पागल तो नहीं हो गये तेरासा! वैसे हम पहले सोचते थे कि तेरा दिमाग कुछ गड़बड़ है। असलमें भगवानकी तरफ जो जाते हैं उनका दिमाग, अुनके लिये थोड़ा गड़बड़ दिखाई पड़ता ही है, जो नहीं जाते। हम पहले ही साचते थे कि तेरा दिमाग कुछ न कुछ ढीला है तीन पैसे से चर्च बनेगा ? तेरासा ने कहा "मैं हूँ, तीन पैसे हैं, ओर परमात्मा भी है" ? तेरासा, वह परमात्मा

कहां है ? तेरासाने कहा "वह तीसरी शक्ति है वह तुम्हें दिखाई नहीं पड़ेगी क्योंकि अभी तुम अपने भीतर तीसरी शक्ति को नहीं खोज सके" जो व्यक्ति अपने भीतर तीसरी शक्ति को खोज लेता है वह तत्काल सारे जगत में भी तीसरी शक्तिको देखने में समर्थ हो जाता है।

आप द्वन्द्व को ही देख रहे हैं लेकिन यह खयाल नहीं हैं कि जो द्वन्द्व को देख रहा है और समझ रहा है, वह द्वन्द्व में नहीं हो सकता। वह द्वन्द्व के बाहर ही होगा। अगर दो लड़ र हें आपके भीतर तो निश्चित ही आप उन दोनों के बाहर हैं। अन्यथा आप देखेंगे कैसे ? अगर आप उन दानों में से एकसे जुड़े होते तब ता एकसे आपका तादात्म्य हो गया होता और दूसरे से आप अलग हो गये होते। लेकिन आप कहते हैं द्वन्द्व हो रहा है। मेरा बायां और दायां हाथ लड़ रहे हैं। मेरे दायें आर बायें हाथ लड़ पाते हैं क्योंकि बायें और दायें हाथ के बीच मैं एक तीसरी ताकत हूँ। अगर मैं बायां हाथ हूँ तो दायें हाथ से मेरा क्या आन्तरिक द्वन्द्व है ? वह पराया हो गया। अगर मैं दायां हाथ नहीं, बायां हाथ हूँ तो दायां हाथ पराया हो गया। आन्तरिक द्वन्द्व कहां है ? आन्तरिक द्वन्द्व इसलिए है कि एक तीसरा भी है जो देख रहा है। कह रहा है कि मनमें बड़ा द्वन्द्व है। मन कभी यह कहता है मन कभी वह कहता है लेकिन जो मन के सम्बन्धमें कह रहा है वह कौन है ? द्वन्द्व में उतरें और इस तीसरे को पहचानते जायँ। जैसे जैसे द्वन्द्व में उतरेंगे यह तीसरा साक्षी है यह दिखाई पड़ना शुरू हो जायेगा। और जिस दिन यह तीसरा दिखाई पड़ा उस दिन द्वन्द्व से विदा शुरू हो जायेगा। तीसरा नहीं दिखाई पड़ता इसलिए द्वन्द्व है तीसरा दिखाई पड़ता है तो जोड़ शुरू हो जाता है।

द्वन्द्वसे भागें मत। द्वन्द्व की प्रक्रिया अनिवार्य है। उससे ही गुजरकर वह जो द्वन्द्व के पार है उसे पाया जा सकता है। पूरी गीता उस तीसरे बिन्दु पर खींचने की कोशिश ही है। अर्जुनको, पूरे समय अर्जुन को खींचने की कृष्ण की चेष्टा यही है कि वह तीसरे को पहचान ले। तीसरे की पहचान के लिए सारा श्रम है। वह तीसरा सबके भीतर है। और सबके बाहर भी है। पर जब-तक भीतर दिखाई न पड़े बाहर दिखाई नहीं पड़ सकता है। भीतर दिखाई पड़े तो बाहर भी नहीं दिखाई पडने लगता।

प्रश्न : आचार्यश्री आपने धनंजयको मानवीय गुणोंका प्रतीक बताया और सात्र के कथनसे तो स्वजन हत्या ख्यालसे धनंजय का कम्प जाना क्या मानवीय नहीं था? युद्ध की निवृत्ति का उसका विचार मोहवशात् प्रस्तुतिसंगत नहीं था? सेक्सपियर की हेमलेट की तरह जिनका विषाद to kill to या Not to kill मारना या न मारना प्रकार का था? तिलक ने गीता किताब अर्जुन की विषाद का हेमलेट मनोदशा का, जोड़ निकाला क्या यह उचित है?

उत्तर : सात्र जो कहता है वह अर्जुन के लिए ठीक ही कहता है। अर्जुन का भी संकट है। सात्र, कामु या उनामनो हाईडिगर पश्चिमके जो भी अस्तित्ववादी विचारक हैं वे ठीक अर्जुनकी मनः-स्थितिमें हैं। इसलिए सावधान रहना। पश्चिम में कृष्ण पैदा हो सकता है क्योंकि जहां अर्जुन की मनःस्थिति हो वहां कृष्णके पैदा हो जाने की संभावना हो जाती है। पूरा पश्चिम [एक्ससिन्टियल क्राईसीस] में है। पूरे पश्चिम के सामने चिन्तातुरता एकमात्र सत्य होकर खड़ी हो गयी है। क्या करें और क्या न करें? यह या वह क्या चुने? कौनसा मूल्य चुननें योग्य है? कौनसा मूल्य चुनने योग्य नहीं है? सब संदिग्ध हो गया और ध्यान रहें पश्चिम में भी यह जो अस्ति-त्ववादी चिन्तन पैदा हुआ है वह पीछले दो युद्धों के बीचसे पैदा हुआ है।

सात्र या काम या उनामनो पीछले दो महायुद्धोंकी परिणति है। पिछले दो महायुद्धोंने पश्चिम के चित्तमें वह स्थिति खड़ी कर दी है जो अर्जुन के चित्तमें महाभारतके सामने खड़ी हो गयी थी। विगत दो युद्धोंने पश्चिम के सारे मूल्य डगमगा दिये हैं। और अब सवाल है लडना या नहीं लडना। लडने से क्या होगा और ठीक स्थिति वैसे हैं कि अपने सब मर जायेंगे तो लडनेका क्या अर्थ हो? और युद्ध की इतनी विकट स्थिति खड़ी हो जाय तो शान्तिके क्षणमें बनाये गये सब नियम संदिग्ध हो जाय तो इसमें आश्चर्य नहीं है। यह ठीक सवाल उठाया है।

सात्र ठीक अर्जुन की स्थिति में है। खतरा दूसरा है। सात्र की मनःस्थितिसे खतरा नहीं है। सात्र अर्जुन की मनःस्थितिमें है लेकिन समज रहा है कृष्ण की स्थिति में है। अर्जुन की मनःस्थितिमें जिज्ञासा करें, ठीक हैं। प्रश्न पूछे, ठीक है। वह उत्तर दे रहा है खतरा वहाँ है। खतरा यहाँ है कि सात्र जिज्ञासा नहीं कर रहा है।

वह प्रश्न नहीं पूछ रहा है कि क्या है ठीक, सात्र उत्तर दे रहा है कि कुछ भी ठीक नहीं है। कोई मूल्य नहीं है अस्तित्व अर्थहीन है। यह जो उत्तर दे रहा है कि ईश्वर नहीं है जगतमें, आत्मा नहीं है जगतमें, मृत्युके बाद बचना नहीं है जगतमें, साराका सारा अस्तित्व एक अव्यवस्था है। एक संयोगजन्य घटना है। इसमें कोई सार नहीं है कहीं भी। यह जो उत्तर दे रहा है यह खतरा है। अर्जुन भी उत्तर दे सकता था। अर्जुन सिर्फ जिज्ञासा कर रहा है और मैं मानता हूँ कि जिसे दिखाई पड़ता है जैसे सात्रको दिखाई पड़ा कि कोई मूल्य नहीं है, कोई अर्थ नहीं कोई प्रयोजन नहीं है। अगर सचमुचमें ऐसा दिखाई पड़ता है तो सात्रको भी कहने का कोई अर्थ नहीं। चुप रह जाना चाहिये ऐसी स्थितिमें मौन ही सार्थक मालूम पड़ सकता है। व्यर्थ है सारी बात,

लेकिन मौन नहीं है । आतुर है कहनेको समझनेको, जो कह रहा है उसे दूसरेको राजी करनेको । तब डर होता है, तब डर यह होता है कि सात्र भी भीतर असंदिग्ध नहीं हैं कि जो वह कह रहा है कि वह ठीक है शायद वह सात्र दूसरोंको समजाके दूसरों के चेहरे पर यह देखनेको उत्सुक है कि कहीं उनको अगर ठीक लगती है यह बात, तो ठीक होगी। मैं भी उसे ठीक मान लूं ।

सात्र जिज्ञासा करें यह बात ठीक है । लेकिन पश्चिम जिज्ञासा को उत्तर बनाया जा रहा है और जब जिज्ञासा उत्तर बनती है और जब शिष्य गुरु हो जाता है और जब पूछना ही बताना बन जाता तब एक [क्राअिसेस ओफ वेल्यूझ] पैदा होती है जो कि पश्चिम में पैदा हो गयी हैं । सब अस्तव्यस्त हो गया है । अुस अस्तव्यस्ततामें कहीं कोई राह नहीं दिखाई पड़ती । नहीं दिखाई पड़ती इसलिए नहीं कि राह नहीं है। लेकिन हम यह मान ही लें कि राह है ही नहीं । यही हमारा उत्तर बन जाय तो फिर राह दिखाई पड़नी असंभव है। अर्जुन यह नहीं मानता । अर्जुन बड़ी जिज्ञासा करता है राह होगी मैं खोज पाउँगा, मैं पूछता हूँ आप मुझे बतायें, वह कृष्ण को कह रहा है आप मुझे बतायें, आप मुझे समजायें । मैं अज्ञानी हूं मुझे कुछ पता नहीं । विनम्र है अर्जुनका अज्ञान । सात्रका अज्ञान विनम्र नहीं है सात्रका अज्ञान बहुत [असर्टिव] खतरा है और जब अज्ञान [असर्टिव] होता है जब अज्ञान मुखर होता है तो जितने खतरे हैं उतने और किसी बातसे नहीं होते लेकिन अकसर ऐसा होता कि अज्ञान मुखर होता है ।

अर्जुन पूछ रहा है । वह कहता है कि मुझे कुछ पता नहीं है । मैं सन्देह में पड़ गया हूं। मैं डूबा जा रहा हूँ । संकटमें मुझे कोइ मार्ग दिख नहीं पडता, लेकिन मार्ग हो सकता है । इसकी

खोज जारी है । मैं मानता हूँ कि अर्जुन सात्रसे ज्यादा साहसी है । क्योंकि इतने गहन संकटमें भी मार्गकी खोज बड़े साहस की बात हैं । सात्र उतना साहसी नहीं है उसके वक्तव्य बड़े साहसी मालूम पड़ते हैं उतना साहसी नहीं है ।

असलमें कई बार ऐसा होता है कि अन्धेरी गलीमें आदमी निकलता है तो सीटी बजाता हुआ निकलता है । सीटी बड़ी साहसी मालूम पडती है आसपासके लोगोंको । लेकिन सीटी बजानेसे साहसका पता नहीं चलता । अुससे सिर्फ इतना पता चलता है कि आदमी डर रहा है । तो वह सीटी साबूत नहीं साहसका । वह सिर्फ भयको छुपानेकी चेष्टा होती है । वह जो अराजकता है पश्चिमके सामने दो महायुद्धोंने प्रगट कर दी हैं वह जो नीचे से एक बवंडर प्रगट हुआ है और भूमि फट गयी है । और एक ज्वालामुखीने मुंह फाड दिया है । पश्चिमके सामने उस ज्वालामुखीको हटानेकी कोशिश चल रही है । है ही नहीं जीवनमें कोई अर्थ । अिसलिए अनर्थसे जानेकी जरूरत क्या है ? है ही नहीं कोई मूल्य इसलिए मूल्यकी खोजकी चिंता क्या करनी ? है ही नहीं कोई परमात्मा तो प्रार्थना करनेका क्या फायदा है ? है ही नहीं कोई आशा इसलिए निराशामें चिन्तित होने की कोई जरुरत नहीं । निराशामें चिन्तित होनेकी चेष्टा सिर्फ अिस बातकी सूचक है कि हृदय बहुत कमजोर है, साहस कम है । असलमें आशा तीव्र निराशामें पडती है तभी पता चलता है कि है या नहीं और जब अन्धकारमें ज्योतिका खोजनेकी चेष्टा चलती है तभी पता चलता है । प्रकाशकी कोई आकांक्षा, गहरा साहस, गहरी लगन और गहरे संकल्प से जुड़ी है या नहीं जुड़ी है ? पश्चिमकी सात्रवादी चिन्तना निराशाको स्वीकार कर रही है । निराशा है अिससे पश्चिम उबरेगा नहीं । अिसलिए एक्सासिटयालिसम और उस तरहके विचारक फैशनसे ज्यादा नहीं है । और फैशन मरनी शुरू हो गयी अब फैशन मर रही है ।

अब अस्तित्ववाद कोई बहुत जीवित धारणा नहीं है। बच्चे पश्चिमके उसको भी अिन्कार कर रहे हैं वह भी पूरानी फैशन हो गयी है। छोडो यह बकवास। लेकिन सात्रकी पीढीने जो निराशा दी है उसका परिणाम आनेवाली पीढ़ी पर दिखाई पड़ रहा है। वह पीढ़ी कह रही है कि ठीक है हम सडक पर नंगे नाचेंगे क्योंकि तुम्हींने तो कहा कि कोई अर्थ नहीं तो फिर कपडे पहननेमें ही कौनसा अर्थ है। तो फिर हम किसी भी तरहके काम सम्बन्ध निर्मित करेंगे क्योंकि तुम्हींने तो कहा है कि कोई अर्थ नहीं है तो फिर परिवारका भी क्या अर्थ ? तो फिर हम किसीको आदर नहीं देंगे क्योंकि जब तुम्हींने कहा है कि ईश्वर नहीं है ता फिर आदरका क्या अर्थ और हम कलकी चिंता नहीं करेंगे। आज युनिवर्सिटी अमेरिका और यूरोपकी, लडके खाली करके भाग रहे हैं उनसे कहते हैं उनके माबाप पढ़ो; तो वे कहते हैं कलका क्या भरोसा ? तुम्हींने तो कहा है सब अनिश्चित है तो पढ लिखके भी क्या होगा ? और लडके पूछते हैं हिरोशीमामें लड़के पढ़ रहे थे कालेजमें और अेटम गिर गया और सब समाप्त हो गया। हम भी पढ़ेंगे तुम अेटम तैयार कर रहे हो किस दिन गिरा दोगे कुछ पता नहीं तो हमें जी लेने दो। जो दो चार क्षण मिले हैं हमें जी लेने दो।

तो पश्चिममें जीवनका जो विस्तार है टाईममें समयमें जो जीवनकी यात्रा है वह अेकदम खंडित हो गयी। क्षणभर टिक गया। अभी जो क्षण है कर लो। अगले क्षणका कोई भरोसा नहीं है और अगले क्षणका भरोसेका करोगे भी क्या ? अन्नन्तः तो मृत्यु ही है। अगला क्षण मृत्यु ही है। टाइम जो है वह मृत्यु का पर्यायवाची हो गया पश्चिममें। समय और मृत्यु एक ही अर्थमें हो गये। अभी जो हैं वह हैं और कोई मूल्य नहीं है।

अभी एक आदमीने कई हत्यायें कीं। जब अदालतमें उससे पूछा तो उसने कहा क्या हर्ज है ? जब सभी को मर ही जाना है तो मैंने मरनेमें सहायता की। और वे तो मर ही जातें। उनको मारने में मुझे जो थोडा आनन्द मिला है उसको लेनेमें क्या हर्ज़ है ? जब कोई मूल्य ही नहीं है। सात्रकी पीढी पश्चिमका एक खोखलेपन से भर गयी क्योंकि उसके पास उत्तर नहीं है। सिर्फ प्रश्न ही थे और प्रश्नको उत्तर बना दिया। अगर अर्जुन जीत जाय, इस मुल्कमें भी खालीपन पैदा हो सकता है।

अर्जुन नहीं, गीता और कृष्ण जीत गये वह एक संघर्ष था बड़ा कृष्ण और अर्जुनके बीच। अगर अर्जुनको धून सवार हो जाय गुरु होनेकी और अपनी जिज्ञासाओंको उत्तर बना दें और वह अपने अज्ञानको ज्ञान मान लें तो इस मुल्कमें वही स्थिति पैदा हो जाती जो पश्चिममें अस्तित्ववादी चिन्तन के कारण पैदा हुआी है। स्थिति वही है लेकिन पश्चिमके पास अभी भी कृष्ण नहीं है। लेकिन इस स्थितिमें पश्चिम में कृष्ण पैदा हो सकते हैं। और बहुत आश्चय की बात नहीं है कि 'कृष्ण कोन्शसनेस' जैसे आन्दोलन पश्चिमके मन को पकड गये हैं। कोइ आश्चर्य नहीं पश्चिम के सडकों पर लड़के और लड़कियां ढोल पीटकर कृष्ण का भजन और कीर्तन कर रहे हैं यह कोई आश्चर्य नही है। यह कोई आकस्मिक नहीं है।

इस जगतमें आकस्मिक कुछ भी नहीं होता। अिस जगतमें फूल भी खिलता है तो लम्बे कारण होते हैं। अगर लंडन की सडकपर कोई 'हरे कृष्ण' का भजन ढोल पीटकर घूमता है ता यह कोई आकस्मिक नहीं है। यह पश्चिम के चितकी कहां गहरी पीड़ा है। अर्जुन तो मौजूद हो गया, पर कृष्ण कहां है ? प्रश्न तो खड़ा हो गया पर उत्तर कहां है ? उतर की तलाश है। उत्तर की तलाश पैदा हुआी है। इसलिए ठीक सवाल था यह।

मैं अर्जुन को मनुष्यका प्रतीक कहता हूँ और अर्जुनका जो ममत्व पकड़ा वह भी मनुष्य की मनुष्यता है। लेकिन नीत्से का एक वचन आपसे कह दूं। नीत्से ने कहा है कि अभागा होगा वह दिन जिस दिन मनुष्य मनुष्यके पार होनेकी आकांक्षा छोड़ देगा। अभागा होगा वह दिन जिस दिन मनुष्य की प्रत्यंच मनुष्य को पार करने वाला तीर न खींचेगा। अभागा होगा वह दिन जिस दिन मनुष्य मनुष्य होने से तृप्त हो जायेगा। ठीक, मनुष्य मंजिल नहीं है पडाव है उसे पार होना ही है। अर्जुन मंजिल नहीं है। पड़ाव है। स्वाभाविक है। अपनों को चाहे आदमी के लिए वह स्वाभाविक है। आदमीके लिये अपनोंको मारनेसे डरें स्वाभाविक है। आदमी के लिए इधर-और; पडके करूँ या न करूँ; यह या वह; चिन्ता है। लेकिन मनुष्य के लिए जो स्वाभाविक है वह जीवन का अन्त नहीं है। और मनुष्य के लिए जो स्वाभाविक वह सिर्फ मनुष्य के लिए स्वाभाविक है और उस स्वभावसे चिन्ता और पीड़ा और तनाव भी जुडे हैं। अशान्ति और दुःख और विक्षिप्तता भी जुड़ी हैं। मनुष्य को अगर हम स्वाभाविक समझें तो वह स्वाभाविकता ठीक वैसे ही है जैसे केन्सर स्वाभाविक है, टी. बी. स्वाभाविक है लेकिन टी. बी. के स्वभाव के साथ पीड़ा भी जुड़ी है। इसी तरह मनुष्यको हम अगर पशु की तरफ से देखें तो मनुष्य एक विकास है और अगर परमात्मा की तरफ से देखें तो (डीसीज) है एक बिमारी है।

यह अंग्रजीका शब्द (डीसीज) बहुत अच्छा है। यह दो शब्दों से बना है। डीस-इज उसका मतलब सिर्फ इतना होता है बेचैनी। Not it is तो आदमी एक डीसीज है एक बेचैनी है अगर हम परमात्मा की तरफसे। पशु भी अगर हमारे सम्बन्धमें सोचते होंगे तो वे भी नहीं सोचते होंगे कि हम विकसित हैं। वे भी सोचते होंगे हमारे बीच कुछ लोग गड़बड हो गये विक्षिप्त हो गये। उनका दिमाग खराब हो गया सिवाय परेशानी में। क्योंकि जब कोई पशु

देखता होगा कि आदमी साईकोलिस्ट के दफतर में जाता है। आदमी मनोवैज्ञानिक के पास अपने मनकी जांच के लिए जाता है। जब देखते होंगे आदमी पागलखाने खडे करते हैं। जब देखते होंगे कि ये आदमी दिन रात चिन्ता में जीता है। तो पशु भी कभी सोचते होंगे कभी न कभी उनकी जमात बैठती हागी और वे सोचते होंगे कि इन बेचारों को कितना समजाया जाय कि मत आदमी बनो। नहीं मानें और फल भोग रहे हैं। जैसा कि पिता अक्सर बेटों के सम्बन्ध में सोचते हैं।

पशु पिता है। हमउसी यात्रा से आते हैं। जरूर सोचते होंगे कितना समझाया लेकिन बिगड़ गयी यह [जनरेशन] यह पीढी भटक गयी। लेकिन उन्हें पता नहीं इस भटकाव से सम्भावनायें खुल गयी लेकिन उन्हें पता नहीं इस यात्रासे खुली है। स्वभावतः जो घर बैठा वह उतना परेशान नहीं होता जितना जो यात्रा पर निकला है वह परेशान होता है। राह की धूली भी है, राह की गड्डे भी हैं राह की भूलें भी हैं राहपर भटकन भी हैं। अनजान रास्ता है। पास काई नकसा नहीं खोजना है और चलना है और रास्ता बनाना है। लेकिन जो चलेंगे, भूलेंगे, भटकेंगे, गिरेंगे दुःखी होंगे वे ही पहुंचते हैं। अर्जुन स्वाभाविक है मनुष्यके लिए लेकिन अर्जुन खुद ही पीड़ा से भरा है। वह मनुष्य होने की इच्छामें नहीं हैं। वह कहता है या तो दुर्योधन हो जाय या कोई समझा दे कि जो हो रहा है वह सब ठीक है, या कोई उपर उठा दे अर्जुन होने से। उसका दुःख उसकी पीड़ा उसकी चिन्ता वही है।

गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते ।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥३०॥

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥३१॥

न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च ।
किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा ॥३२॥

तथा हाथसे गाण्डीव धनुष गिरता है और त्वचा भी बहुत जलती है तथा मेरा मन भ्रमित-सा हीं रहा है, इसलिये मैं खडा रहनेको भी समर्थ नहीं हूँ ॥ ३० ॥

और हे केशव ! लक्षणोंको भी विपरीत ही देखता है तथा युद्धमें अपने कुलको मारकर कल्याण भी नहीं देखता ॥ ३१ ॥

और हे कृष्ण ! मैं विजयको नहीं चाहता और राज्य तथा सुखोंको भी नहीं चाहता, हे गोविन्द ! हमें राज्यसे क्या प्रयोजन है अथवा भोगोंसे और जीवनसे भी क्या प्रयोजन है? ॥ ३२ ॥

अर्जुन के अंग शिथिल हो गये हैं । मन ने साथ छोड दिया है । धनुष छुट गया है । वह अितना कमजोर मालूम पडता है कि कहता है कि रथपर मैं बैठ भी सकूंगा कि नहीं ? इतना भी सामर्थ्य नहीं है । यहाँ हमें दो तीन बाते समझनी जरुरी हैं।

एक शरीर हमारे चित का प्रतिफलन है । गहरेमें मन में जो घटित होता है वह शरीर के रोये रोये में फलित हो जाता है। यह अर्जुन क्षणभर पहले कुछ ऐसा नहीं था। इस क्षण में वह बीमार नहीं हो गया । इस क्षण में उसके शरीर में कुछ अशक्ति नहीं आ गयी। इस क्षण भर वह वृद्ध नहीं हो गया। इस क्षण भर में क्या हो गया है ? इस क्षणभर में एक ही घटना घटी है । उसका मन क्षीण हो गया है। उसका मन दुर्बल हो गया । उसका मन स्व खण्डोमें विभाजित हो गया । स्व विरोधी खंडोमें ।

जहाँ मन विभाजित होता है विरोधी स्वखंडोमें वहाँ मन तत्काल रुग्ण–दीन हो जाता है। जहाँ मन संयुक्त हाता है एक संगीतपूर्ण स्वर में वहाँ शरीर तत्काल स्वस्थ और अविभाजित हो जाता हैं । उसके शरीर धनुष्य का गिर जाना उसके हाथपैरोंका कँपना उसके रोओंका खडा हो जाना सूचक है इस बातका कि शरीर मन की छायासे ज्यादा नहीं हैं। नहीं, पहले ऐसा ख्याल नहीं था। वैज्ञानिक कहते रहे है कि मन हमारे शरीर की छाया से ज्यादा नहीं है। जो इस भ्रान्त चिन्तन को मानकर सोचते रहे हैं वे लोग भी यही कह रहे हैं। बृहस्पति भी यही कह रहे हैं। पिथोगोरस भी यही कहेगा, कार्लमार्क्स, एन्जन्स भी यही कहेंगे कि वह जो चेतना है वह केवल 'बाय प्रोडेक्ट' वह जो भीतर मन है वह केवल हमारे शरीर की उप उत्पत्ति है। वह केवल शरीरकी छाया है।

अभी अमेरिका में दो मनोवैज्ञानिक हुअे जेम्स और लँजे। उन्होंने एक बहुत अद्भुत सिद्धांत प्रतिपादित किया आर वह वर्षों-तक स्वीकार किया जाता रहा। 'जेम्स लँजे थियेरी' उसके सिद्धांत का नाम था। बडे मजे की बात अुन्होंने कही थी। उन दोनोंने यह सिद्ध करने की कोशिश की थी कि सदा से हम यह समझते रहे हैं कि आदमी भयभीत होता है इसलिये भागता है । उन्होंने कहा यह गलत हैं। चूंकि अगर शरीर प्रमुख है और मन केवल उप-उत्पत्ति है तो सच्चाई ऊल्टी होनी चाहिये। उन्होंने कहा मनुष्य चूंकि भागता है इसलिये मय अनुभव करता है। हम सोचते रहे हैं सदा से आदमी क्रोधित होता है इसलिये मुट्ठियाँ मींच जाती हैं। क्रोधित होता है इसलिये दांत भींच जाते हैं। क्रोधित होता है इसलिये आँखोमें खून उतर जाता है। क्रोधित होता है इसलिये साँस तेजीसे चलती हैं और हमले की तैयारी होती है।

जेम्स लँजेने कहा गलत है यह बात। क्योंकि शरीर प्रमुख है। इसलिये घटना पहले शरीर में घटेगी। मन में केवल प्रतिकूलन

होगा। मन सिर्फ मिरर एक दर्पण, इससे ज्यादा कुछ नहीं। इसलिये उसने कहा, नहीं, बात उल्टी है। आदमी चूंकि मुट्ठियाँ मींच लेता है आदमी चूंकि दांत कस लेता है आदमी चूंकि शरीरमें खून तेजी से दौडने लग जाता है आदमी, चूंकि साँस तेजी से चलती है इसलिये क्रोध करता है। सिर्फ यह सिद्ध करने के लिए और यहाँ तर्क का बड़ा मजेदार मामला है और तर्क कभी कभी कैसे गलत रास्तोंपर ले जाता है वह देखने जैसा है उसने कहा। तो मैं कहता हूँ एक आदमी बिना भागे हुअे बिना शरीर पर भागनेका कोई प्रभाव दिखाये भयभीत होके बतादें या एक आदमी बिना आँखें लाल किये मुट्ठियाँ मींचे, सांस खींचे और क्रोध करके बता दे। मुश्किल है ये बात। कैसे क्रोध करके बतायियेगा? तब दोनों ने कहा ठीक है जब क्रोध इनके बिना नहीं हो सकता है तब क्रोध इनका ही जोड है लेकिन पता नहीं जेम्स लँजे को किसीने क्यों नहा कहा कि इससे उतरा होता है क्रोध।

एक अभिनेता क्रोध करके बता सकता है दांत भींच सकता है आँखे लाल करके बता सकता है, हाथ भीच सकता है फिर भी भीतर उसके कोई क्रोध नहीं हो सकता है। एक अभिनेता प्रेम करके बता सकता है ओर जितना अभिनेता प्रेम करके बता सकता है उतना शायद कोई भी नहीं बता सकता। भीतर उसके कोई भी प्रेम नहीं होता है। यह अर्जुन जेम्स लँजे के सिद्धांत के बिलकुल विपरित काम कर रहा है। बिलकुल उल्टा काम कर रहा है। जेम्सलँजे इसको मानने के लिए बिलकुल राजी नहीं होंगे। कहेंगे बिलकुल उलटी बातें कर रहा है, इसे कहना चाहिये चूंकि मेरा धनुष गिरा जाता है; चूंकि मेरे रोंगटे खडे हुअे जाते हैं; चूंकि मेरा शरीर शिथिल हुआ जाता है; चूंकि मेरे अंग शिथिल हुअे जाते हैं; अिसलिये हे केशव मेरे मनमें बडी चिन्ता पैदा हो रही है। लेकिन यह एसा नहीं कह रहा है। चिन्ता उसे पहले पैदा हो गयी है।

क्योंकि इसके शरीर के शिथिल होने और इसके रोंगटे खडे होने में और कोई भी कारण नहीं है। बाहर कोई भी कारण नहीं है। एकक्षण में बाहर कुछ भी नहीं बदला है। बाहर सब वही है लेकिन भीतर सब बदल गया है।

तिब्बतमें 'लाहसा' युनिवर्सिटीमें विद्यार्थियोंका शिक्षण जो होता था उसमें भी योगका कुछ वर्ग अनिवार्य था। और एक तिब्बतका नियमित प्रयोग 'लाहसा' युनिवर्सिटीमें चलता था। उसमें भी विद्यार्थीयोंको उत्तीर्ण होना जरूरी था। और वह था योग। वह शरीरमें भीतर मनके कारण गर्मी पैदा करने की प्रक्रिया अजीब, सिर्फ मनसे बाहर बर्फ पड़ रही है और आदमा नग्न खड़ा है। और उसका शरीरसे पसीना चू रहा है। इतने पर राजी नहीं होते थे वे।

जब पश्चिमसे आये हुअे डाक्टरोंने भी इस परीक्षा को किया तो बहुत हैरान हुअे वे। क्योंकि जब विद्यार्थियोंकी परीक्षा होती थी तो रातमें खुले मैदानमें, बर्फके पास, झीलके किनारे उन्हें नग्न किया जाता था और उनके पास कोट कमीज गिले करके रखे जाते थे पानीमें डुबोके। और वे नग्न खड़े हैं। और उन लडकोंको सर्वाधिक अंक मिलेंगे जो रात अपने शरीरमें इतनी गर्मी पैदा करके अुनके कपड़े सूखा दे शरीर पे पहने के। जितने ज्यादा कपड़े वह सूखा देगा, उतने ज्यादा अंक उसे मिलने वाले हैं।

जब पश्चिमसे आये हुअे डॉक्टरोंके एक दलने यह देखा तो वे दंग रह गये। उन्होंने कहा जम्सलँजे का थेअरी का क्या हुआ? क्योंकि बाहर तो बर्फ पड़ रही है और वे डॉक्टर लबादे पर लबादे पहन कर भी भीतर कंपे जा रहे हैं। और ये नग्न खड़े ड़के क्या कर रहे हैं जो इनके शरीर पर जो होना चाहिये वह हो रहा है।

लेकिन मन इन्कार कर रहा है। और मन कहता जा रहा है कोई बर्फ नहीं है। और मन कहता जा रहा है कोई धूप है, तेज गर्मी है। और मन कहता जा रहा है शरीरमें आग तप रही है। इस-लिए शरीर को पसीना छोड़ना पड़ता है। ये जो अर्जुन के साथ हुआ वह उसके मनमें पैदा हुअे भँवर का शरीर तक पहुँचा हुआ परिणाम है। और हमारी जिन्दगीमें शरीरसे बहुत कम भँवर मनतक पहुँचते हैं लेकिन मनसे ही अधिकतम भँवर शरीरतक पहुँचते हैं। लेकिन हम जिन्दगीभर शरीरकी फिक्र किये जा रहे हैं। अगर कृष्णको थोड़ी भी, जिसको तथाकथित वैज्ञानिकबुद्धि कहते हैं होंती तो वे अर्जुनका कहते मालूम होता है तूझे फ्लू हो गया है। अगर उन्होंने मार्क्सको पढ़ा होता तो वे कहते तेरे शरीरमें किसी हार्मोनकी कोई कमी हो गयी है-तू चल और किसी जनरल अस्पतालमें भर्ती हो जा। लेकिन उन्होंने यह बिलकुल नहीं कहा। वे शिथिलिगत होते अर्जुनको कुछ और समझाने लगे। वे उसके मनको बदलनेकी कोशिश करने लगे।

जगतमें दो ही प्रक्रिया हैं। या तो आदमी के शरीरको बदलने की प्रक्रिया या आदमी की चेतना को बदलने की प्रक्रिया। विज्ञान आदमी के शरीरको बदलने की प्रक्रिया पर ध्यान देता है। धर्म मनुष्य की चेतना को बदलते की प्रक्रिया पर ध्यान देता है। यही भेद है।

अिसलिए मैं कहता हूँ धर्म विज्ञान से ज्यादा गहरा विज्ञान है। धर्म महान विज्ञान है। वह परम विज्ञान है। क्योंकि केन्द्र से शुरू करता है। और वैज्ञानिक बुद्धि निश्चित ही केन्द्र से शुरू करेगी। और परिधि पर की नयी चोंटे जरूरी नहीं केन्द्र पर पहुंचे लेकिन केन्द्र पर की गयी चोंटे जरूरी रुपसे परिधिपर पहुँचती हैं। एक पत्तेको पहुँचाया गया नुकसान जरूरी नहीं; जड़ोंतक पहुँचे। अक्सर

तो नहीं पहुँचेगा। पहुँचनेकी कोई जरूर भी नहीं है लेकिन जड़ोंका पहुँचाया हुआ नुकसान पत्तोंको जरूर हो जायेगा पहुँचना ही पडेगा। पहुँचने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। इसलिए अर्जुनकी स्थितिको देखकर कृष्ण उसे कहांसे पकड़ते है? अगर वे शरीरसे पकड़ते तो गीता थियोलोजीकी एक किताब होती। वह एक भौतिक-शास्त्र हाता। पर वे उसे चेतना से पकड़ते हैं अिसलिए गीता एक मानसशास्त्र बन गयी। गीता के मानसशास्त्र बननेका प्रारंभ अर्जुनके शरीरकी घटना को कृष्ण बिलकुल ध्यान ही नहीं देते। वे न उसकी नाडी देखते हैं और न थर्मामिटर लगाते हैं। और वे कहते हैं वे अुसकी फिकर नहीं करते कि उसके शरीर को क्या होता है। वे नहीं कहते हैं कि उसकी चेतना को क्या होता है। यह थोड़ा विचारणीय है। जैसा मैंने कहा आज भी मनुष्य जाति अर्जुन की चेतना से ग्रस्त है। उसके शरीरपर वे परिणाम हो रहे हैं लेकिन हम जो इलाज करते हैं वे शरीर से शुरू होनेवाले हैं इसलिए सब इलाज हो जाते हैं और बीमार बीमार ही बना रह जाता है। अुसकी चेतना से कोई इलाज शुरू नहीं हो पाता।

यहाँ अर्जुन कहता है मेरा मन साथ छोड़ दे रहा है। मैं बिलकुल निर्वीर्य हो गया बलहीन हो गया। बल क्या है? एक तो बल है जो शरीर की मांस पेशियां मसलमें होता है। उसमें तो कोई भी फर्क नहीं पड़ गया है। लेकिन इस क्षण अर्जुन को एक छोटा सा बच्चा भी धक्का दे तो वह गिर जायेगा। इस क्षण अर्जुन की मसल्स कुछ भी काम नहीं करेंगी। एक छोटासा बच्चा उसे हरा सकता है। मस्क्युलर ताकत् कुछ अर्थ की नहीं मालूम होती। एक और बल है जो संकल्पसे दिलसे पैदा होता है। सच तो यह है कि वही बल है जो संकल्पसे पैदा होता है। वह जा संकल्प से पैदा होनेवाला बल है वह बिलकुल ही खो गया है। क्योंकि संकल्प कहांसे आये? मन दुविधामें पड़ गया तो संकल्प खंडित हो

जाता है । मन एकाग्र हो तो खंडित संगठित हो जाता है । मन दुविधामें द्वन्द्वग्रस्ततामें कॉम्प्लिक्ट में पड़ जाय तो संकल्प खो जाता । हम सब निर्बल हैं । संकल्प नहीं है । वही संकल्प खो गया है । क्या करूं, क्या न करूं, करना क्या उचित होगा, क्या न करना उचित होगा सब आधार खो गये पैर के नीचेसे ।

अर्जुन असलमें लटका रहा गया, वह त्रिशंकु हो गया । यह प्रत्येक मनुष्य की स्थिति है और इसलिए अद्‌भुत सत्य है कुरान में और अद्‌भुत सत्य है बायबिलमें, और अद्‌भुत सत्य है झेन्दअवेस्ता, में और दुनियाके अनेक अनेक ग्रन्थोंमें अद्‌भुत सत्य है । फिर भी गीता विशिष्ट है । उसका कुछ कारण इतना है कि वह धर्मशास्त्र कम मानसशास्त्र ज्यादा है । उसमें कोरे स्टेटमेन्ट नहीं है कि ईश्वर और आत्मा है उसमें कोई दार्शनिक वक्तव्य नहीं है । और कोई दार्शनिक तर्क नहीं है । गीता मनुष्य जाति का पहला मनोवैज्ञानिक ग्रंथ है वह पहली सायकोलॉजी है । इसलिए उसके मूल्य की बात ही कुछ और है अगर मेरा वश चले तो कृष्ण को मैं मनोवैज्ञानिक कहना चाहूँगा वह पहले व्यक्ति है जो दुविधाग्रस्त चित्त [माइन्ड इन कॉम्प्लिक्ट] संतापग्रस्त मन खंड खंड टूटे हुए संकल्प को अखंड करने की कहें तो वे पहले आदमी है जो साइक ॲनालिसिस कर रहा है । मनस् विश्लेषण का उपयोग करते हैं । सिर्फ मनस् विश्लेषण का ही नहीं पर साथ एक दूसरी बात का भी मनस् विश्लेषण का भी । कृष्ण सिर्फ फ्राईड की तरह मनोविश्लेषणक नहीं वे संश्लेषक भी हैं । वे मन की खोज नहीं करते कि क्या क्या खंड हैं उसके पर वे इसकी भी खोज करते हैं कि कैसे अखण्ड हो । अर्जुन कैसे अखण्ड हो जाये । और अर्जुन की चित्तदशा हम सबकी चित्तदशा है लेकिन शायद संकट के जितने तीव्र क्षणोंमें हम कभी नहीं होते । हमारा संकट भी कुनकुना ल्युकवार्म होता है । इसलिए हम उसको

सहते जाते हैं इतना ड्रोमेटिक, इतना त्वरा से भरा इतना नाटकीय संकट हो तो शायद हम भी अखण्ड होने के लिए आतुर हो जायँ ।

अर्जुन उबलते हुअे पानी में एकदम पड़ गया इसलिए सिच्यु-अेशन एक्स्ट्रीम है वह ठीक स्थिति पूरी है । उबलती हुई है इसलिए अर्जुनने एकदम धनुष्यबाण छोड़ दिया । हम अपने तराजु भी नहीं छोड़ सकते इस तरह । हम अपने गज भी नहीं छोड़ सकते इस तरह । हम अपने कलम भी नहीं छोड़ सकते इस तरह । और रथपर बैठनेमें ही वह एकदम इतना कमजोर हो गया । क्या हुआ संकट से इतनी तीव्रता से राजी होना adjust होना मुश्किल हो गया । मैं आपसे कहना चाहूंगा कि राजी मत होते चले जाना नहीं सबको ही ऐसे कोई मौके नहीं आते कि महाभारत हो सबकी जिन्दगी में । और बड़ी कृपा है भगवान की । हर एक आदमी के महाभारत का मौका लाना पड़े तो कठिनाई होगी बहुत लेकिन जिन्दगी महाभारत है पर लम्बे फैलावे पर त्वरा नहीं है उतनी तीव्रता नहीं है उतनी सवनता नहीं है । धीमे धीमे सब होता है मौत आती है और हम अेडजेस्ट होते चले जाते हैं । हम समायोजित होते चले जाते हैं । तब जिन्दगी में क्रान्ति नहीं हो पाती । अर्जुन की जिन्दगी में क्रान्ति निश्चित है । इधर या उधर उसे क्रान्ति से गुजरना ही पडेगा । पानी उबलता हुआ है ऐसी जगह है उसे कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा या तो वह भाग जाय जैसा कि बहुत से लोग भाग जाते हैं सरल वही होगा शोर्टकट वही होगा । निकटतम यही मालूम पड़ता कि भाग जाय इसलिए अधिक लोग जीवनके संकट में से भागनेवाला संन्यास निकाल लेते हैं । अधिक तो जीवन के संकट में से इस्किक्ट रियेन्सीयेशन निकाल लेते हैं एकदम जंगल भाग जाते हैं । वे कहते हैं अहमदाबाद नहीं हरिद्वार जा रहे हैं । अर्जुन भी वैसे ही स्थितिमें था । हालांकि गीताका

अपने साथ ले जाते हैं तब बडी हैरानी हाती है । हरिद्वारमें गीता पढते हैं । अर्जुन भी पढ़ सकता था हरिद्वार। वह भी जाना चाहता था । लेकिन उनको एक गलत आदमी मिल गया । कृष्ण मिल गया । उसने कहा, रुक, माग मत क्योंकि भगौड़े परमात्मा तक पहुँच सकते हैं ? भगौडे परमात्मा तक पहुँच नहीं सकते हैं ।

जो जीवनके सत्यसे भागते हैं वे परमात्मा तक नहीं पहुँच सकते जो जीवनको ही साक्षात्कार करनेमें असमर्थ हैं वे परमात्माका साक्षात्कार नहीं कर सकते । क्योंकि जो जीवन को ही देखकर शिथिलगात हो जाते हैं जिनके गांडीव छूटने लगते हैं हाथसे और जिनके रोंये कंपने लगते हैं और प्राण थर थराने लगते हैं जीवनको ही देखकर । परमात्मा के समक्ष वे खड़े नहीं हो सकेंगे । जीवन तैयारी है । जीवन कदम कदम तैयारी है। उस विराट सत्यके साक्षात्कार की । और अर्जुन तो जीवनके एक छोटेसे तथ्य से ही भागा चला जा रहा है । लेकिन भागने की तैयारी उसकी पूरी हो गयी ।

अब यह बडे मजेकी बात है वह रथपर नहीं चढ पाता । वह कहता है कि रथपर चढ़ने की शक्ति नहीं है अगर उससे कहा कि भाग जाओ जंगलकी तरफ तो वह बड़ा शक्ति पायेगा । अभी भाग जायेगा । एकदम इतनी तेजीसे दौडेगा जितनी तेजीसे कभी नहीं दौड़ा है । जो आदमी जिन्दगीसे लड़नेकी सामर्थ्य नहीं जुड़ा रहा है वह भागने की सामर्थ्य जुड़ा रहा है । सामर्थ्य की तो कमी नहीं मालूम पडती । शक्तिकी तो कमी नहीं मालूम पड़ती । शक्ति तो है । अगर कृष्ण उससे कहे छोड़ सब तो वह बड़ा प्रफुल्ल हो जायेगा ।

लेकिन, यह प्रफुल्लता ज्यादा देर टिकेगी नहीं । अगर अर्जुन जंगल चला जाय, तो थोडी देरमें ही उदास हो जाएगा । बैठ भी

जाय तो संन्यासीके वेशमें एक तरफ वृक्षके नीचे तो थोडी देरमें जंगलसे ही लकडी वगैरह बटोरकर वह तीर कमान बना लेगा । वह आदमी है । चूंकी हम अपने से भागकर कही नहीं जा सकते ।

उसके घातकी शीतलता को मिटानेके लिए, उसे वापिस संकलपवान होने के लिए, उसे वापिस शक्ति, संकल्प, वापिस व्यक्तित्व और आत्मवान बनानेकी पूरी चेष्टा है । इसलिए मैं तो सारी चर्चा करुंगा । अिसी दृष्टिसे चर्चा करुगा कि वह आपके कामकी है । अगर आपके भीतर अर्जुन न हो ता आप मत आएं । क्योंकि आपके काम की बात नहीं हैं। वह बेअिमान है । क्योंकि आपके भीतर द्विधा न हो आपके भीतर संघर्ष न हो, आपके भीतर बेचैनी न हो, तो आप मत सूने । उससे कोई संबंध नहीं है । आपके भीतर द्विधा हो बेचैनी हो, तनाव हो आपके भीतर निर्णयमें कठिनाई हो, आपके भीतर खण्ड खण्ड आदमी हों, और आप भी मीतरसे टूट गए हों तो ही आनेवाली बात आपके अर्थकी हो सकती है ।

अर्जुन ने बड़ी सतर्क बात कही है। बहुत कंडीशनल, शर्त बंधा हुआ उसका वक्तव्य है। सुख के भ्रम से वह मुक्त नहीं हुआ लेकिन, वह कह रहा है, अपनों को मारकर जो सुख मिलेगा ऐसे सुख से क्या प्रयोजन ? अपनों को मारकर जो राज्य मिलेगा ऐसे राज्य से क्या प्रयोजन ? अगर अपनों को बिना मारे राज्य मिल जाये। अपनों को बिना मारे सुख मिल जाये तो अर्जुन लेने को तैयार है। सुख मिल सकता है इसमें कोई संदेह नहीं, कल्याण हो सकता है अिसमें कोई संदेह नहीं। अपनों को मारने में उसे संदेह है। इस मनोदशा को समझ लेना उपयोगी है। हम सब भी ऐसे ही शर्तो में सोचते हैं। जैसे सारा जीवन ही 'यदि' पर खड़ा है।

यदि ऐसा हो तो सुख मिलेगा, यदि ऐसा न हो तो सुख नहीं मिल सकेगा, यदि ऐसा हो तो कल्याण हो सकेगा, यदि ऐसा न हो तो कल्याण नहीं हो सकेगा। लेकिन एक बात निश्चित है कि सुख मिल सकता है। शर्त पूरी होनी चाहिए। और मज़े की बात यही है कि जिसकी शर्त है उसको सुख कभी नहीं मिल सकता। क्यों? क्योंकि जिससे सुख का भ्रम नहीं टूटा, जिसका सुख का भ्रम नहीं टूटा, जिसका सुख का मोड़ बंद नहीं हुआ उसे सुख नहीं मिल सकता है। सुख मिलता केवल उन शर्तों से जो इस सत्य को जान लेता है कि सुख इस जगत में संभव नहीं है। बड़ा उल्टा दिखाई पड़ता है। जो सोचता है इस जगत में सुख मिल सकता है, कुछ शर्तें बस पूरी हो जाय तो नए नए दुःख खोजता चला जाता है। असल में हर दुःख को खोजना वे तो दुःख बनाकर ही खोजना पडता है। दुःख के खोजने की तरकीब तो यही है। उसे सुख मानकर खोजना पडता है। जबतक खो जाते हैं तबतक सुख मालूम पडता है। जब मिल जाता है तब दुःख मालूम पडता हैं। लेकिन, मिल जाने के बाद कोई उपाय नहीं।

अर्जुन अगर कहे सुख संभव कहाँ है? संसार में कल्याण संभव कहाँ है? राज्य में प्रयोजन कहाँ है? अगर वह ऐसा कहे तो उसका प्रश्न बेशर्त है। अनकंडिशनल है। तब उत्तर बिलकुल और होता। लेकिन वह यह कह रहा है अपनों को मारके सुख कैसे मिलेगा? सुख तो मिल सकता है अपने न मारे जायँ। तो सुख लेने वह तैयार है। कल्याण तो हो सकता है, राज्य में प्रयोजन भी हो सकता है लेकिन, अपने न मारे जायँ तो ही राज्य में प्रयोजन होगा। राज्य व्यर्थ है। महावीर या बुद्ध को जैसा खयाल हुआ, अर्जुन को वैसा खयाल नहीं था। अर्जुन के सारे वक्तव्य उसकी विरोधी मनोदशा की सूचना है। वह जिस चीज को कह रहा है,

बेकार है, उस चीज़ को बेकार जान नहीं रहा है। वह जिस चीज़ को कह रहा है क्या प्रयोजन क्या फायदा? वह पूरे वक्त मन में जान रहा है कि फायदा है, प्रयोजन है। सिर्फ उसकी शर्त पूरी होनी चाहिए। उसका "यदि" अगर पूरा हो जाए, 'if' अगर पूरा हो जाय तो सुख मिलेगा। इसमें उसे कोई भी संदेह नहीं है।

मैंने एक मज़ाक सुनी है। मैंने सुना है कि बर्ट्रेन्ड रसेल मर रहा है। एक पादरी यह खबर सुनके कि बर्ट्रेन्ड रसेल मर रहा है, भागा हुआ पहुँच गया है। कि हो सकता है यह जीवनभरका निष्णात नास्तिक शायद मरते बख्त मौतसे डर जाय और भगवानका स्मरण कर ले। पर उस पादरीकी मरते हुए बर्ट्रेन्ड रसेल के पास भी जानेकी समझनेकी हिम्मत नहीं पडती है। वह भीडमें जो मित्रोंकी अिकट्ठी हो गयी, पीछे डरा हुआ खडा है कि कोई मोका अगर मिल जाय तो वह बर्ट्रेन्ड रसेल को कह दें, अभी भी माँफी मांग ले। और बर्ट्रेन्ड रसेलने करवट बदली और कहा, "हे परमात्मा!" तो उसने सोचा ठीक मौका है। अिस के मुँहसे भी परमात्मा का नाम निकला है। तो वह पास गया और उसने कहा कि ठीक अवसर है अभी भी क्षमा मांग लो परमात्मा से। ता बर्ट्रेन्ड रसेलने आँख खोली और उसने कहा "हे परमात्मा!" यदि कोई परमात्मा है, तो बर्ट्रेन्ड रसेल क्षमा माँगता है। यदि कोई बर्ट्रेन्ड रसेलकी आत्मा हो, क्षमा माँगती है कि यदी कोई पाप किए गए हों, क्षमा माँगता है, यदि क्षमा संभव हो।"

सारा जीवन हमारा यदि से घिरा हुआ है। बर्ट्रेन्ड रसेल साफ है, इमानदार है। हम इतने साफ नहीं हैं, अर्जुन भी साफ नहीं। बहुत [कनफ्यूझ] हैं। बहुत उलझा हुआ है। चित्तकी

गाँठ उसकी बहुत तीरछी तीरछी है। वह कह रहा है सुख तो मिल सकता है। लेकिन, यदि अपने न मरे वह कहता है राज्य कल्याणकारी है मिल जाय तो, यदि अपने न मरे। यह यदि ही उसकी गाँठ है। और जो आदमी ऐसा कहता है उसे सुख राज्य, धन, यश उनका मोह नहीं टूट गया। उनकी आकाँक्षा नहीं टूट गयी। उनकी अभिप्सा नहीं टूट गयी। पीछे वह बहुत तैयार है, सब मिल जाय, लेकिन उसके 'यदि' भी पूरे होने चाहिए। इसलिए, कृष्णको निरन्तर पूरे समय उसके साथ श्रम करना पड़ रहा है। वह श्रम उसके सेल्फ कन्ट्रोडक्टरी है। उसके आत्मविरोधी चिंतन के लिए करना पड़ रहा है। क्योंकि पूरे समय यह दिखाई पड रहा है कि वह जो कह रहा है, वही चाह रहा है। जिससे भाग रहा है। जिससे बचना चाहता है उसीको आलिंगन कर रहा है।

अर्जुन की दशा ठीक से समझ लेनी चाहिए। ऐसा अर्जुन हम सबके भीतर है। जिसे हम एक हाथ से धकाते हैं उसे हम दूसरे हाथसे खींचते हैं। एक कदम बाएँ चलते हैं तो तत्काल एक कदम दाएँ चलते हैं। एक कदम परमात्मा की तरफ जाते हैं, एक कदम तत्काल संसार की तरफ उठा लेते हैं। यह जो अर्जुन है ऐसी बैलगाड़ी की तरह जिसमें दोनों तरफ बैल जूते हैं। वह दोनों तरफ खींच रहा है। वह कह रहा है सुख तो है, इसलिए मन भागता है। वह कह रहा है लेकिन, अपनोंको मारना पड़ेगा। इसलिए मन लौटता है। यह स्वविरोध स्मरण रखने योग्य है। क्योंकि अर्जुन की पूरी चित्तदशा इसी स्वविरोध का फैलाव है।

प्रश्न :—आचार्यश्री विषादग्रस्त अर्जुनके चित्त की दशा हमने देखी। अब विशादग्रस्त व्यक्तिका 'विषाद' हो सकता है, परंतु 'विषादयोग' हो सकता है क्या?

उत्तर :—विषादयोग, योग के बहुत अर्थ हैं और योग के भी अर्थ हैं जो साधारणतः योग की हमारी जा धारणा है उसके ठीक विपरीत हैं। यह ठीक ही सवाल है विषाद कैसे योग हो सकता है? आनंदमें ही योग हो सकता है! विषाद कैसे योग हो सकता है? लेकिन विषाद इसलिए योग हो सकता है कि वह आनंद का ही शीर्षासन करता रूप है। वह आनंद ही सिरके बल खड़ा है। आप अपने पैर के बल खडे हों तो भी आदमी है और सिर के बल खडे हो जाएँ तो भी आदमी है। जिसको हम स्व-भाव से विपरीत जाना कहते हैं वह भी स्वभावका उल्टा खड़ा हो जाना है। जिसको हम विक्षिप्त कहते हैं वह भी स्वभावका वकृत हो जाना है। लेकिन, है स्वभाव ही। सोनेमें मिट्टी मिल जाए तो अशुद्ध सोना ही कहना पड़ता है। अशुद्ध है, इसलिए पूछा जा सकता है कि जो अशुद्ध है हम उसे सोना क्यों कहेंगे? लेकिन, सोना ही कहना पड़ेगा। अशुद्ध होकर भी सोना है। और इसलिए भी सोना कहना पड़ेगा कि अशुद्धि जल सकती है। और सोनो वापिस सोना हो सकता है।

विषादयोग इसलिए कह रहे हैं कि विषाद है, विषाद जल सकता है। योग बच सकता है। आनंद की यात्रा हो सकती है। कोई भी इतने विषाद को उपलब्ध नहां हो गया कि स्वरूप को वापिस लौट न सके। विषाद की गहरी से गहरी अवस्था में भी स्वरूप तक लौटने की पगडंडी शेष है। उस पगडंडी के स्मरण के लिए योग कह रहे हैं। और, वह जो विषाद है वह भी इसलिए हो रहा है। विषाद क्यों हो रहा है? एक पत्थर को विषाद नहीं होता। नहीं होता इसलिए कि आनंद भी नहीं हो सकता। विषाद हो इसलिए रहा है, वह भी एक गहरे अर्थ में आनंद का स्मरण है: इसलिये विषाद हो रहा है। वह भी इस बात का स्मरण है, गहरे में चेतना कही जान रही है कि जो मैं हो सकता हूँ वह

नहीं हो पा रहा हूँ। जो मैं पा सकता हूँ वह मैं नहीं पा रहा हूँ। जो संभव है वह संभव नहीं हो पा रहा है। इसलिए विषाद हो रहा है। इसलिए, जितन प्रतिभाशाली व्यक्तित्व हो उतने ही गहरे विषाद में उतरेगा। सिर्फ जडबुद्धि विषाद को उपलब्ध नहीं होता। क्योंकि जडबुद्धि को तुलना का उपाय भी नहीं होता। उसे यह भी खयाल नहीं होता कि मैं क्या हो सकता हूँ। उसे इस ख्याल में आनंद संभव है। उसके विषाद की कालिमा बढ़ जाएगी। और विषाद ़यादा गहरा दिखाई पड़ेगा। जिसे सुबह का पता है उसे रात के अंधकार में बहुत अंधकार दिखाई पड़ेगा। जिसे सुबह का कोई पता नहीं है उसे रात भी सुबह हो सकती है। रात भी उसे लग सकती है ठीक है। अर्जुन को इस विषाद की स्थिति में भी योग ही कहा जा रहा है क्यों कि यह विषाद बोध भी स्वरूप के विपरीत कन्ट्रोडक्टरी दिखाई पड़ता है। अन्यथा नहीं दिखाई पड़ेगा। ऐसा विषादयोग और किसी को उस युद्ध के मैदान में नहीं हो रहा है। ऐसा दुर्योधन को नहीं हो रहा है।

कल एक मित्रने रास्तेमें जा रहा था, तो उन्होंने पूछा— आपने दुर्योधनकी तो बात की, युधिष्ठिरके संबंधमें क्या ख्याल है? क्योंकि दुर्योधन को नहीं हो रहा माने आदमी भला नहीं है। पर युधिष्ठिर तो भला आदमी है धर्मराज है। उसे क्यों नहीं हो रहा है? तो यह भी थोडा विचारणीय है। आशा चाहिए कि युधिष्ठिर को हो। लेकिन, युधिष्ठिर को नहीं हो रहा है। युधिष्ठिर तथाकथित धार्मिक आदमी है। और बूरा आदमी भी तथाकथित धार्मिक आदमीसे बेहतर होता है। क्योंकि बूरे आदमीको आज नहीं कल बूरेकी पीडा और बूरेका कार्य चुभने लगेगा। लेकिन तथाकथित धार्मिक आदमीको वह पीडा भी नहीं चुभती। क्योंकि वह मानकर ही चलता है कि धार्मिक है। विषाद कैसे हो? युधिष्ठिर अपने

धार्मिक होनेमें आश्वास है। आश्वासन बड़ा झूठा है। लेकिन आश्वासन है। असलमें युधिष्ठिर रूढिग्रस्त धार्मिक आदमीकी प्रतिमा है। दो तरहके धार्मिक आदमी होते हैं। एक तो उधार धार्मिक आदमी होते हैं जिनका धर्म अतीत की उधारी से आता है। और एक वे धार्मिक आदमी होते हैं जिनका धर्म उनकी आन्तरिक क्रांति से आता है। तो अर्जुन आन्तरिक क्रांतिके द्वारपर खड़ा हुआ धार्मिक आदमी है। धार्मिक है नहीं। लेकिन, क्रांति के द्वारपर खड़ा है उस पीड़ा से गुजर रहा है जिसमें धर्म पैदा हो सकता है।

युधिष्ठिर तृप्त, अतीतसे जो धर्म मिला है उससे राजी है। इसलिए, धार्मिक भी हो सकते हैं, जुआं भी खेल सकते हैं तब भी कोई संदेह मनमें पैदा नहीं होता। धार्मिक भी हो सकते हैं, राज्यके युद्धपर भी जा सकते हैं। और, सब तथाकथित धर्मके आसपास अधर्म पूरी तरह चलता है। कोई पीड़ा उससे नहीं होती है। आम-तौर से मंदिर में गुरुद्वार-चर्च में जानावाला आदमी युधिष्ठिर से तालेमल रखता है। तृप्त, गीता रोज पढ़ता है धार्मिक आदमी की बात समाप्त हो गयी। गीता कंठस्थ है, पक्का धार्मिक आदमी है। बात समाप्त हो गयी। सब उसे मालूम है जो मालूम करने योग्य है। बात समाप्त हो गयी। ऐसा आदमी—चली हुअी कारतूस जैसा होता है, उसमें कुछ चलने को नहीं होता है खाली कारतूस होता है। उसमें बारुद नहीं होती है। खाली कारतूस अच्छी भी मालूम पड़ती है क्योंकि उससे बहुत खतरा भी नहीं होता। युधि-ष्ठिर इस अर्थ में धर्मराज है। अतीत से जो धर्म मिला है उसकी धरोहर है। अतीत से, परंपरासे, रूढिसे जो धर्म मिला है वे उसकी प्रतिमा पुरुष है। उन्हें कोई अड़चन नहीं होती। तथा-कथित धार्मिक आदमी Hypocratc होता है। पाखंडी होता है। उसके दो चेहरे होते हैं। एक उसका धार्मिक चेहरा होता है, जो

वह दिखाने के लिए रखता है। एक उसका असली चेहरा होता है जो वह काम चलाने के लिए रखता है और इन दोनों के बीच कभी Confict पैदा नहीं होती है। यही Hypocracy का सूत्र है राज है। उनके बीच कभी द्वन्द्व पैदा नहीं होता। कभी उसे ऐसा नहीं लगता कि मैं दो हूँ। वह बड़ा Liquid होता है। बडा तरल होता है। वह इधर से उधर बड़ी आसानी से हो जाता है। उसे कोई अड़चन नहीं आती। वह अभिनेता की तरह पात्र अभिनय बदल लेता है। उसे अड़चन नहीं आती। कल वह राम बना था, आज उसे रावण बना दें तो उसे कोई अड़चन नहीं आती। वह रावण की वेशभूषा पहन के खड़ा हो जाता है। रावण की भाषा बोलने लगता है। यह जो तथाकथित धार्मिक आदमी है वह, अधार्मिक से भी बदतर है। ऐसा मैं कहता हूँ। ऐसा इसलिए, कहता हूँ कि अधार्मिक अपनी पीडा को ज्यादा दिन नहीं झेल सकेगा। आज नहीं कल कांटा चुभेगा, लेकिन, जो आदमी समझौते कर लिया है वह पीड़ा को अनंत काल तक झेल सकता है। इस-लिए युधिष्ठिर को पीड़ा नहीं आती हैं। युधिष्ठिर बिलकुल राजी है। अब यह बड़े मजे की बात है अधार्मिक आदमी बिलकुल राजी है उस युद्ध में और यह अर्जुन जो न तो आधा धार्मिक होने से राजी है अभी तथाकथित धर्म से राजी है यह चिंतित है। अर्जुन बहुत Authentic प्रामाणिक मनुष्य है। उसकी प्रामाणिकता असमें है कि चिंतित है उसे। उसकी प्रामाणिकता इसमें है कि प्रश्न है उसके पास। उसकी प्रामाणिकता असमें है कि जो स्थिति है उसमें वह राजी नहीं हो पा रहा है। यही उसकी बेचैनी, यही उसकी पीड़ा, उसका विषाद बनती है। विषादयोग इसलिए ही कह रहा है कि अर्जुन विषाद को उपलब्ध हुआ। धन्य हैं वे जो विषाद को उपलब्ध हो जायें। क्योंकि जो विषाद को उपलब्ध होंगे उन्हें मार्ग खोजना पड़ता हैं। अभागे हैं वे जिनको विषाद भी नहीं मिला।

उनको आनंद तो कभी मिलेगा नहीं। धन्य हैं वे जो विरह को उपलब्ध हो जाऐं क्योंकि विरह मिलन की आकांक्षा हैं। असलिए विरह भी योग हैं। वह मिलन की आकांक्षा है वह विरह के लिए खोजता हुआ मार्ग हैं! योग तो मिलन ही है। लेकिन, विरह भी योग हैं। क्योंकि विरह भी मिलन की पुकार और प्यास है। विषाद भी योग हैं योग तो आनंदमें ही हैं। लेकिन विषाद भी योग है क्योंकि विषाद आनंद के लिए जन्मने की प्रक्रिया है। इसलिए विषाद-योग कहा गया हैं।

प्रश्न :—तो क्या 'विषादयोग' धार्मिक है?

उत्तर :-अर्जुन का विषाद यदि विषादमें ही तृप्त हो जाऐं और बन्द हो जाऐं तो वह अधार्मिक है। और विषाद अगर यात्रा बन जायें, गंगोत्री बन जायें और विषाद से गंगा निकलें आर, आनंद के सागरतक पहुंच जाय तो धार्मिक हैं, विषाद अपनेमें न तो अधार्मिक है, न धार्मिक। अगर विषाद बन्द करता है व्यक्तित्व को तो आत्मघाती हो जाऐगा। और अगर विषाद व्यक्तित्व को बहाव देता है तो, आत्मपरिवर्तनकारी हो जाऐगा। पार्टलिज जों कहतें हैं किDispaired dipsul is relegio s वह जो विषाद है, दुःख है, वह अपने आपमें धार्मिक है। यह अधूरा सत्य है। पार्टलिज पूरा सत्य नहीं बोल रहे हैं वह अधूरा सत्य है आधा सत्य है, विषाद धार्मिक बन सकता है उसकी 'पासिबलिटी' है, उसकी संभावना है धार्मिक बनानेको अगर विषाद बहाव बन जाय। लेकिन अगर विषाद वर्तुल बन जाय सर्कल बन जाय अपने में ही घूमने लगे तो सिर्फ आत्मघाती हो सकता है। धार्मिक नहीं हो सकता। यह बडे मझे की बात है कि आत्मघाती व्यक्ति उस जगह पहुँच जाता है जहां से या तो उसे आत्मा परिवर्तन करनी पडेगी या आत्मघात करना पड़ेगा। एक बात तय है कि पुरानी

आत्मा फिर नही चलेगी। तो हम अैसा भी कह सकते हैं कि Suicide in it self is relegious आत्महत्या अपने आपमें धार्मिक है। लेकिन, यह अधूरा सत्य होगा वैसा ही जैसा पार्टलीज ने कहा। हां, आत्महत्या की स्थिति में आया व्यक्ति के सामने दो विकल्प हैं। दो Alternatives या तो वह अपने को मार ड़ाले जो कि बिलकुल अधार्मिक होगा, या वह अपने को बदलडालें जो कि मारने की और गहरी किमिया है। पर वह धार्मिक होगा।

बुद्ध उस जगह आ जाते हैं जहाँ या तो आत्महत्या करें, या आत्मरुपांतर करें। महावीर उस जगह आ जाते हैं या ता आत्महत्या करें या आत्मरुपांतर करें। अर्जुन भी उस जगह खड़ा है। जहाँ या तो मीट वह जाअें, मर जायें अपनेको समाप्त कर लें और या अपनेको बदले और नए तलोंपर चेतना का ले जाये। पार्टलिजका वक्तव्य अधूरा होनेका कारण है। क्रिश्चानिटीका बुनियादी सत्य अधूरा है। ईसाईयतका बुनियादी सत्य अधूरा है। और इसलिए ईसाईयतने dispair का बड़ा व्याख्याता है। उसके पास पैनि दृष्टि है। लेकिन पैनी दृष्टि जरूरी नहीं है कि पूरी हो ईसाईयतने जीससकी जो शकल पकडी है वह despair की है। ईसाईयतने जीससकी और कोई शकल नहीं पकडी है। ईसाईयतके पास जीससकी हँसती हुअी कोई तस्वीर नहीं है। ईसाईयतके पास जीससका नाचता हुआ प्रसन्न कोई व्यक्तित्व नहीं है। ईसाईयतके पास सत् चित् आनंदकी घोषणा करनेवाले जीससकी कोइ धारणा नहीं है। कोई प्रतिमा नहीं है। उनके पास प्रतिमा हैं जीससकी शूलीपर लटके हुए। कन्धे पर टिका हुआ सिर, आँखे उदास, मरनेकी घड़ी और क्रोस। इसलिए ईसाईयतका प्रतिक बन गया शूली। यह तो डिसेपअर और शूली है यह अपने आपमें धार्मिक नहीं है। हो सकती है धार्मिक। नहीं भी हो सकती है। और पोर्टलिज बट्रेन्ड रसेलके

संबंधमें गलत बात कहते हैं। पूरी ही तरह गलत कहते हैं। अगर वे यह कहते हैं कि बट्रेन्ड रसेल जैसे लोग आत्मवंचक हैं क्योंकि बट्रेन्ड रसेल नास्तिक है। ईश्वरपर उसकी कोई आस्था नहीं है फिर भी बट्रेन्ड रसेलको अर्थहीनता है। Empitness खालीपनका कोई बोध नहीं होता है जैसे सात्रको होता है, या कामूका या और किसीको होता है। बट्रेन्ड रसेलको क्यों नहीं होता ? अगर वे नास्तिक हैं तो खालिपनका अनुभव उन्हें होना चाहिए ? जरूरी नहीं है।

नास्तिकता भी मेरी दृष्टि से दो तरह की होती है। अपने में बन्ध और बाहर बहती हुअी। जो नास्तिक अपनेमें बन्ध हो जाएगा वह खाली हो जायेगा। क्योंकि जो आदमी 'नहीं' के उपर जींदगी खडी करेगा, वह खाली हो जाएगा। जो आदमी कहेगा कि नहीं मेरे जीवनका आधार है वह खाली नहीं होगा तो और क्या होगा ? क्योंकि नहीं के बीज से अंकुर नहीं निकलता। नहीं के बीज से कोई जीवन विकसित नहीं होता है जीवनमें कहीं न कहीं हां अगर न हो तो जीवन खाली हो जाअेगा लेकिन, जरूरी नहीं है कि नास्तिकता नहीं पर ही खडी हो नास्तिकता हां पर भी खडी हो सकती है ईश्वर को इन्कार करता है लेकिन, प्रेम को इन्कार नहीं करता। और, जो आदमी प्रेम को अिन्कार नहीं करता उसकी नस्तिक केवल नासमझ आस्तिक ही कह सकते हैं। जो आदमी प्रेमको इन्कार नही करता हैं, वह बहुत गहरेमें परमात्मा को स्वीकार कर रहा है। फार्मला नहीं हैं उसकी स्वीकृति। वह भगवानके मंदिरमें मूर्ति रखके, वह घंटी नही बजाता। लेकिन जो बजाते हैं, वे कोई आस्तिक हैं ऐसा माननेका कोई भी कारण नहीं है। क्योंकि घंटी बजानेसे आस्तिकता का क्या लेना देना है ?

प्रेमका स्वर जिसके जीवनमें हो, उसके जीवनमें प्रार्थना ज्यादा दूर नहीं हैं। प्रेमका स्वर जिसके जीवनमें हो, अुसके

जीवनमें परमात्मा ज्यादा दूर नहीं है। और प्रेम अिन्कार करनेवाला सूत्र नहीं है । प्रेम स्वीकार करनेवाला सूत्र है । प्रेम बडी गहरी हां है । पूरे अस्तित्वके कारण । इसलिए मैं बट्रेन्ड रसेलको सिर्फ नास्तिक औपचारिक अर्थोमें कहता हूँ । औपचारिक अर्थोमें बहुतसे लोग आस्तिक है । लेकिन, बट्रेन्ड रसेलकी नास्तिकता, आस्तिकता की तरफ बहती हुअी है । बहती हुअी है, उसमें बहाव है । वह खुल रही है। वह फूलोमें भी आनंद ले पाता है। हमारा आस्तिक मंदिर में जा सके, फूल भी चढ़ा देता है लेकिन फूलमें कोई आनंद नहीं ले पाता। फूल तोडते वख्त अुसे अैसा नहीं लगता कि परमात्माको तोड रहा है । पत्थरकी मूर्तिके लिए, जिन्दा एक फूल को तोड़के चढ़ा देता है । यह आदमी गहरेमें नास्तिक है। इसका अस्तित्वके प्रति कोई स्वीकार भाव नहीं है। न अस्तित्वमें अिसे कोई परमात्मा के प्रतीति है । ईसे कोई प्रतीति नहीं है। इसकी पत्थरकी मूर्तिको कोई तोड़ दे तो यह हत्यापर उतारु हो जाता है । जिन्दा मूर्तियों को तोड़ देता है। इसलिए इसके मन में आस्तिकता का कोई संबंध नहीं है। इसकी आस्तिकता आत्मवंचना है। और बट्रेन्ड रसेल की नारितकता भी आत्मवंचना नहीं है। क्योंकि मुझे ऐसा दिखाई पड़ता है कि रसेल इमानदार आदमी है और इमानदार आदमी जल्दी आस्तिक नहीं हो सकता । सिर्फ, बेइमान आदमी जल्दी आस्तिक हो सकते हैं । क्योंकि जिस आदमीने ईश्वर को भी विना खोजे हाँ भर दी उससे बड़ा बेइमान आदमी मिल सकता है !

जिस आदमीने ईश्वर जैसे महान तत्त्व का किताब में पढ़कर स्वीकार कर लिया इस आदमी से ज्यादा आत्मवंचक आदमी आदमी मिल सकता है ? ईश्वर बचों का खेल नहीं है। ईश्वर किताबों में पढे हुए पाठ से संबंधित नहीं हैं। ईश्वर और मां–बाप से सीखे हुए सिद्धांतों से क्या वास्ता ? ईश्वर तो जीवन की बड़ा

प्राणवन्त खोज और पीड़ा है । बड़ी Anguish बडे विषाद से उपलब्ध होगा। बडे श्रमसे, बड़ी तपश्चर्या से, बड़ी इन्कार से गुजरने पर बड़ी पीड़ा; बड़े खाली मनसे गुजरने पर। बड़ी मुश्किल से, शायद जन्मों की यात्रा, जन्मोंजन्म की यात्रा और खोज और जन्मों की भटकन और जन्मों की असफलता और विकलता । तब शायद, इस सारी प्रसव पीडा के बाद वह अनुभव आता है, जो व्यक्तित्व का आस्तिकता देता है। लेकिन मैं मानता हूँ कि बट्रेन्ड रसेल वैसी यात्रापर है इसलिए खाली नहीं है । सात्र खाली है; उसकी नास्तिकता closed है । Encircled in oneself अपने भीतर ही वर्तुल बनाके घूम रही हैं । तो अपने भीतर तो आदमी सिर्फ खाली हो जाएगा । और 'नहीं' पर Nothingness पर जिसने आधार रखे उसकी जिंदगी में कैसे फूल खिले ? उसने मरूस्थल में जिंदगी बोने की कोशिश की है। वहाँ फूल नहीं खिल सकते। 'नहीं' से बड़ा कोई मरूस्थल नहीं हैं। और जमीन पर जो मरूस्थल होते हैं, वहाँ तो Oasiss भी होते हैं। वहाँ तो कुछ मरुद्यान भी होते हैं। लेकिन, 'नहीं' के मरूस्थल में कोई Oasiss कोई मरुद्यान नहीं होता। वहाँ कोई हरियाली नहीं खिलती। हरियाली तो हाँ में ही खिलती है। आस्तिक ही पूरा हरा हो सकता है। आरितक ही पूरा भरा हो सकता है। आस्तिक ही फूलों को उपलब्ध हो सकता है। नास्तिक नहीं। लेकिन नास्तिकता दो तरह की हो सकती है। और आस्तिकता भी दो तरह की हो सकती है। आस्तिकता तब खतरनाक हो जाती है जब अपने में बंद हो जायें। और आस्तिकता तब खतरनाक हो जाती है जब उधार और Borrowed होती है। आस्तिकता का खतरा उधारी में है। आरितकता का खतरा अपने में बंद हो जाने में है।

सब उधार आस्तिक हैं पर नास्तिक तक होने की इमानदारी नहीं है। तो आस्तिक होने की वहुत विराट कदम बिल्कुल असंभव है।

मैं तो मानता हूँ कि नास्तिकता पहली सिढ़ी हैं, आस्तिक होने के लिए। शिक्षण है नास्तिकता। 'नहीं' कहने का अभ्यास 'हाँ' कहने की तैयारी है। और जिसने कभी 'नहीं' नहीं कहा उसके 'हाँ' में कितना बल होगा? और जिसने कभी नहीं कहने की हिम्मत नहीं जुटाई, उसके हाँ में कितना प्राण, कितनी आत्मा हो सकती है?

बट्रेन्ड रसेल मैं मानता हूँ नास्तिकता के उस दौड़से गुजरता हुआ व्यक्ति है। जो खोज रहा है और बिना खोजे हाँ नहीं भर सकता। उचित है, ठीक है, धामक है। रसेल को मैं नास्तिक कहता हूँ, लेकिन धार्मिक। धार्मिक नास्तिक। और, तथाकथित आस्तिकों को मैं आस्तिक कहता हूँ लेकिन, अधामिक। अधार्मिक आस्तिक। ये शब्द उल्टे मालूम पड़ते हैं लेकिन उल्टे नहीं हैं। अर्जुन का विषाद बहुत धार्मिक है। उसमें गति है। अगर वह चाहे तो कृष्ण जैसे किंमती आदमी को पास पाकर कह सकता है कि गुरु तुम जो कहते हो ठीक हैं। हम लड़ते हैं। नहीं कहता है कृष्ण से झूझता है। कृष्ण से झूझने की हिम्मत साधारण नहीं है। कृष्ण जैसे व्यक्तित्व के पास हाँ कहने का मन होता है। कृष्ण जैसे व्यक्तित्व को ना कहने में पीडा होती है। कृष्ण जैसे व्यक्तित्व से प्रश्न उठाने में भी दुःख होता है। लेकिन अर्जुन है कि पूछे चला जा रहा है। पूछे चले जा रहा है वह कृष्ण के व्यक्तित्व को आड में रख देता है। अपने प्रश्नको छोडता नहीं है। अिसका भय नहीं लेता मनमें कि क्या कहेगा कोई? अश्रद्धालु हूँ संदेह करता हूँ? शंका उठाता हूँ? आस्थावान नहीं हूँ?

कृष्ण जैसा व्यक्ति मिला हो, मान लो गुरु, और स्वीकार करो, तब आस्तिकता उधार हो जाती। लेकिन, नहीं वह प्रामाणिक आस्तिकता के खोजमें है। इसलिए, इतनी वडी गीता की लम्बी यात्रा

हुअी। पूछता चला जाता है। कृष्ण भी अद्भुत है। अपनी महिमा का जोर डाल सकते थे। अगर गुरु का जरा भी मोह होता तो जरूर डाल देते। लेकिन, जो भी आस्तिक है उसे गुरु होने की आकांक्षा नहीं हो सकती। परमात्मा ही है तो और व्यक्ति को गुरु होने की कोई जरुरत नहीं रह जाती।

जिसे परमात्मा पर भरोसा है वह प्रश्नों को संदेह की दृष्टि से नहीं देखता, निन्दा की दृष्टि से भी नहीं देख सकता। क्योंकि वह जानता है, परमात्मा है। और यह व्यक्ति पूछ रहा है तो यात्रा कर रहा है। पहुँच जाएगा। इसे पहुँचने दे सहज ही। गंगा वह चली है। तो सागर तक पहुँच चाएगी। अभी उसे पता नहीं कि सागर है। लेकिन, बह रही है। तो बेफिक्र रहे पहुँच जाएगी। वह कहता नहीं कि रूक जाओ और मान लो और गंगा अगर रूक जाए और मान ले कि सागर है तो कभी जान नहीं पाएगी। रूक जायेगी, अेक डबरा बन जायेगी, सड जायेगी। फिर उसी को सागर समझेगी। ऐसा आस्तिक अर्जुन नहीं है। अगर ठीकसे समझें तो अर्जुन और बट्रेन्ड रसेल के व्यक्तित्व में कुछ मेल है। जैसा मैंने कल कहा कि सात्र और अर्जुन के व्यक्तित्वमें कुछ मेल है। लेकिन यहाँ मेल टूट जाता है इसके आगे। सात्र अपनी चिंता को सिद्धान्त बना लेता है। अर्जुन अपनी चिंता का सिर्फ प्रश्न बनाता है। यहां उसका बट्रेन्ड रसेल से मेल है। बट्रेन्ड रसेल agnostic है। जिंदगी के अन्तिम क्षणतक पूछ रहा है।

दूसरी बात. यह है कि उसे कोई कृष्ण नहीं मिला। कोई हर्जा भी नहीं है। आगे कभी मिल जाएगा। कोई हर्जा नहीं हैं। लेकिन पूछना कहाँ है? यात्रा जारी है। मैं मानता हूँ इस पृथ्वीपर बट्रेन्ड रसेल के आसपास पार्टेलिज जसे जो आस्तिक हैं ये Tnsincere हैं।

पोर्टलिज आत्मवंचक हो सकते हैं; रसेल नहीं । और इस पृथ्वीपर पार्टलिज और रसेल जैसे व्यक्ति साथसाथ रहे हैं। मेरी अपनी समझ है कि बट्रेन्ड रसेल आस्तिकता की तरफ ज्यादा बढ़ा है। पार्टलिज नहीं बढा है। और बड़े मजे की बात है कि दुनियामें धर्मका सबसे बड़ा शत्रु अगर कोई है तो अधर्म नहीं है । Theology धर्मशास्त्र धर्म की सबसे बड़ी शत्रुता शास्त्रीयतासे है ।

वे जो लोग शास्त्रीयता में जीते हैं वे कभी धार्मिक नहीं हो पाते। उसके कारण हैं। क्योंकि धर्म, बुद्धि से उपरकी बात है। और शास्त्र सदा बुद्धि से नीचे की बात है। शास्त्र बुद्धि के उपर नहीं जाता। और, बुद्धि धर्मतक नहीं जाती। पोर्टलिज सिर्फ बुद्धि से जी रहा है। असा नहीं है कि बट्रेन्ड रसेल बुद्धि को इन्कार कर रहे हैं। पूरी तरह बुद्धि से जी रहा है। लेकिन, बुद्धि की स्वीकृति नहीं है। बुद्धि पर भी बट्रेन्ड रसेल को संदेह है। वह Sceptic है बुद्धि के बाबत भी उसे लगता है कि बुद्धि की भी सीमाएं हैं। अर्जुन है बड़ा गहरा समन्वय है रसेल और सात्र जैसे इक्ठे। उसका विषाद धार्मिक है। क्योंकि उसका विषाद श्रद्धापर ले जानेवाला है।

येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च ।
तइमेवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥३३॥

क्योंकि हमें जिनके लिये राज्य, भोग और सुखादिक इच्छित हैं वे ही यह सब धन और जीवनकी आशाको त्यागकर युद्धमें खडे हैं

पग पग पर अर्जुनकी भ्रांतियां जुड़ी हैं। कह रहा है अर्जुन कि अिन पिता पुत्र, मित्र प्रियजनके लिए हम राज्य सुख चाहते हैं।

झूठ कह रहा है। कोई चाहता नहीं है, सब अपने लिए चाहते हैं। और, अगर पिता पुत्रके लिए चाहते हैं तो सिर्फ असिलिए कि वह अपने पिता है, अपना पुत्र है। वह जितना 'अपना' उसमें जुड़ा है उतना ही। इससे ज्यादा नहीं। हां यह बात जरुर है कि उनके बिना सुख भी बड़ा विरस हो जाएगा। क्योंकि सुख तो मिलता कम है, दूसरोंको दिखाई पडे यह ज्यादा होता है। सुख मिलता तो ना के बराबर है। बडे से बड़ा राज्य मिल जाए तो भी राज्यके मिलने में उतना सुख नहीं मिलता जितना राज्य मुझे मिल गया है इतना में अपने लोगोंके सामने सिद्ध कर पाउं तो सुख मिलता है।

आदमी के चिंतना की सीमाएं हैं। अगर एक महारानी रास्तेसे निकलती हो, स्वर्णाभूषणोंसे लदी, हीरे जवाहरातोंसे लदी तो गाँवकी मेहतरानीको कोई इर्ष्या पैदा नहीं होती। क्योंकि महारानी Range के बाहर पड़ती है। मेहतरानी के चिंतनाकी Range नहीं है वह। वह सीमा नहीं है उसकी। मेहतरानीको कोई ईर्ष्या पैदा नहीं होती। लेकिन, पडासकी मेहतरानी अगर एक नकली काचका एक टुकडा भी पहनके निकल जाये तो प्राणमें तीर चुभ जाते हैं। वह Range के भीतर है। आदमी का ईर्ष्याएं, आदमीकी महत्त्वकाक्षाएं, निरन्तर एक सीमामें बंधके चलती हैं। अगर आप यश पाना चाहते हैं तो यह यश जो अपरिचित है Stranges है उनके सामने आपको मजा न देगा। जो अपने हैं, परिचित हैं, उनके सामने ही आपको मजा देगा। क्योंकि जो अपरिचित हैं, उनके सामने अहंकारको सिद्ध करनेमें कोई सुख नहीं है। जो अपने हैं, उन्हींका हरानेका मजा है। जो अपने हैं, उन्हींको दिखानेका मजा है। कि देखो मैं क्या हो गया ? और, तुम नहीं हो पाए।

जीससने कहा है कि पेगंबर या तीर्थंकर अपने ही गांवमें कभी आदरित नहीं होता । यद्यपि चाहेंगे अपनेही गाँवमें आदरित होना लेकिन, हा नहीं सकते । अगर जीसस अपने ही गाँवमें आ गए हो तो लाग कहेंगे, "बढ़ईका वही न ? जोसेफ का, बढईका लडका ! कहां से ज्ञान पा लेता है ? अभी कल तक लकडी काटता था । ज्ञान पा लिया ।" लोग हंसेंगे । इस हंसने में भी बढईके लडकेको, अितनी उंचाईपर स्वीकार करनेकी कठिनाइ है । Range के भीतर है बहुत कठिन है । कोई प्रोफेट अपने गाँवमें कूद जाय बडी कठिन बात है । क्योंकि गाँवकी ईर्ष्याकी सीमाके भीतर है ।

तो विवेकानंदको जितना आदर अमरिकामें मिला उतना आदर कलकत्तामें कभी न मिला । दो चार दस दिन कलकत्ता लौटके स्वागत समारोह हुआ फिर सब समाप्त हो गया । फिर कलकत्तमें लोग कहने लगे वहीं न कायस्थका लड़का है कितना जान सकता है ? रामतीर्थका अमरिकामें भारी सन्मान मिला । काशीमें नहीं मिला । काशीमें एक पंडितने खडे हो के कहा कि संस्कृतका अ, ब, क, नही आता और तुम ज्ञानकी बातें करते हो ? पहले संस्कृत सिखो । और बेचारे रामतीर्थ संस्कृत सीखने गए । Range है एक सीमा, एक वर्तुल है । लेकिन, शायद रामतीर्थको भी इतना मजा है । न्यूयार्कमें सन्मान मिलनेसे ये नहीं आ सकता था जितना काशीमें मिलता ते आता । अिसलिए, रामतीर्थ भी कभी नाराज नहीं हुए । अमरिकामें जबतक थे कभी दुःखी और चिंतित नहीं हुए । काशीमें दुःखी और चिंतित हो गए । निरन्तर ब्रह्मज्ञानकी बातें करते थे । काशीमें इतनी हिम्मत न जुटा पाये कि कह देते कि ब्रह्मज्ञानका संस्कृतसे क्या लेना देना ? भाडमें जाएं तुम्हारी संस्कृत । इतनी हिम्मत न जुटा पाये बल्कि एक टयूटर लगाके संस्कृत सीखने बैठ गए । पीड़ा समज गए ? वह जो अर्जुन कह रहा है सरासर झूठ कह रहा है । उसे पता नही है । क्योंकि झूठ भी आदमीमें

ऐसा खूनमें मिला हुआ है कि उसका पता भी मुश्किलसे चलता है । असलमें असली झूठ वे ही है जो हमारे खूनमें मिल गए हैं । जिन झूठोंका हमें पता चलता है । अुनको बहुत गहराई नहीं है जिन झूठोंका हमें पता नहीं चलता जिनके लिए हम Concious भी नहीं होते चेतन भी नहीं होते वे ही झूठ हमारे हड्डि, मांस मज्जा बन गए हैं ।

अर्जुन वैसा ही झूठ बोल रहा है। जैसा हम सब भी बोलते है । पति अपनी पत्नी से कहता है कि तेरे लिए ही सब करता हूँ। पत्नी अपने पतिसे कहती है तुम्हारे लिए ही सब करती हूँ । कोई किसीके लिए नहीं करता है । हम सब अहंकार केंद्रित होकर जीते हैं । अहंकारका सीमा रेखामें जो जो अपने मालुम पडते हैं उनके लिए भी हम उतना ही करते हैं जितनेसे हमारा अपना मरता है । वह जा अपनापन मरता है जितना वह मेरे Ego मेरे अहंकारके हिस्से होते हैं उतना ही हम अुनके लिए करते हैं । वही सर्वोत्तम अपनी सदीमें रह जाये । अुसके सब कर्म बंध हो जाय ।

जिस मित्रके लिए हम जान देनेको तैयार है कल उसकी जान भी ले सकते हैं । उसको भूल जाता है ? क्या हो जाता है ? जबतक अपने मैं के लिये मजबूत करता था, तबतक अपना था । और जब मैं के लिए मजबूत नहीं करता तब अपना नहीं रह जाता । नही आदमी गलत कह रहा है । उसे पता नहीं हो पाता हो तो बात और हो जाय । उसे पता पडेगा धीरे धीरे जिनके लिए हम राज्य चाहते हैं । नहीं उसे कहना चाहिए जिन्हें बिना राज्य चाहनेमें मजा न रह जाएगा, न जाने जो झूठ बोले जाते हैं वे बहुत गहरे हैं और जन्मों जन्मोंमें हमने उन्हें अपने खूनके साथ आत्मसात कर लिया, एक कर लिया है, वैसे ही झूठ

अर्जुन बोल रहा है। जिनके लिये राज्य चाहता है वेही न होंगे तो राज्यको क्या करूंगा ? नहीं उचित, सही तो यह है कि, वह कहे कि राज्य तो अपने लिये चाहा जाता है। लेकिन जिनकी आंखोंको चकाचौंध करना चाहूंगा जब वे आँखें ही ना होंगी तो अपने लिए भी चाहके क्या करूंगा ? लेकिन, वह अभा यह नहीं कह सकता। इतना ही वह कह सके तो जगह जगह गीताका कृष्ण चूप होनेको तैयार है लेकिन, वह जो भी कहता है उसमें पता चलता हैं कि वह बातें उल्टी कह रहा है अगर वह अेक जगह भी सीधी और सच्ची बात कह दें, तो गीताका कृष्ण तत्काल चूप हो जाएगा। बात खतम हो गयी। चलो, वापिस लौटा देते हैं रथको लेकिन, वह बात खतम नहीं होती।

अर्जुन पूरे वख्त दोहरे वक्तव्य बोल रहा है। बोल कुछ और रहा है, चाह कुछ और रहा है। है कुछ और कह कुछ और रहा है। उसकी दुविधा और कहीं गहरे में है, प्रकट कहीं और कर रहा है। इसे हमें समझते चलना है। तभी हम कृष्ण के उत्तरोंको समझ सकेंगे। जबतक हम अर्जुन के प्रश्नों का उलझाव न समझ लें तबतक प्रश्नों के उत्तरों की गहराई, और प्रश्नों के उत्तरों के सुलझाव का समझना मुश्किल है।

प्रश्न : अर्जुन क्या भौतिक सुखवादी है ?

उत्तर : अर्जुन जहाँ है, वहाँ भौतिक सुखसे ही संबंध हो सकता है। नहीं होता ऐसा नहीं है। आस्तिक का भौतिक सुख से संबंध नहीं होता अैसा नहीं है। हो सकता है। लेकिन, जितना ही वह खोजता है। उतना ही पाता है कि भौतिक सुख असंभावना है। भौतिक सुख की खोज असंभव होती है। तभी आध्यात्मिक सुख की खोज शुरू होती है। तो भौतिक

सुख का भी आध्यात्मिक सुख की खोजमें महत्वपूर्ण Contribution उसका बहुत महत्वपूर्ण दान है। सब से महत्वपूर्ण दान; भौतिक सुख का यही है कि वह अनिवार्य रूपसे विषाद में ले जाता है। अभी यह बड़े मजे की बात है जिन्दगी में वे ही सिढ़ियाँ हमें परमात्मा के मंदिर तक नहीं पहुँचाती जो परमात्मा के मंदिर से ही जुड़ी हैं। अब यह बड़ी उल्टी सी बात मालूम पड़ेगी। स्वर्गतक पहुँचने में वही सिढ़ी काम नहीं आती जो स्वर्गतक जुड़ी हैं। उससे भी ज्यादा, उससे भी पहले वह सिढ़ी काम आती है जो नर्कसे जुड़ी हैं। असल में जबतक नर्क की तरफ की यात्रा पूरी तरह से व्यर्थ न हो जाय, तबतक स्वर्ग की तरफ की कोई यात्रा प्रारंभ नही होती। जबतक बहुत स्पष्ट रूपसे यह साफ न हो जाय कि यह नर्क का मार्ग है। तबतक यह साफ नहीं हो पाता कि स्वर्ग का मार्ग क्या है। भौतिक सुख आध्यात्मिक सुख तक पहुँचाने में एक निषेध चेतावनी का, Negative चेतावनी काम करते है। बार बार हम खोजते हैं भौतिक सुख को और बार बार असफल होते हैं। बार बार चाहते हैं और बार बार नहीं हो पाते हैं। बार बार आकांक्षा करते हैं, और बार बार वापिस गिरे जाते हैं।

यूनानी कथाओं में "सिसीफस" की कथा है। कानूने उस पर एक कथा लिखी। "The mith of Sissifas सिसीफस को सजा दी है देवताओंने कि वह पत्थर को खींचके पहाड़ के शिखरतक ले जाय। और सजा का दूसरा हिस्सा यह है कि जैसे ही वह शिखर तक पहुँचेगा पसीने से लथपथ, हाँफता, थका, पत्थर को घसीटता वैसे ही पत्थर उसके हाथ से छूटकर वापिस गढे में गिर जायेगा। फिर वह नीचे जायेगा। फिर वह पत्थर को घसीट के शिखर तक ले जायेगा और फिर यही होगा। और फिर-फिर यही होता रहेगा

अभी यह सजा है। यह अन्त तक होता रहेगा। अनन्त तक होता रहेगा।

अब वह 'सिसीफस" है फिर जाता है खाई में और फिर उठाता है पत्थरको। जब वह पत्थर को उठाता है फिर इस आज्ञा से उठाता है कि अिस बार सफल हो जायेगा। अब की बार तो पहुँचा ही देगा शिखर पर और बता ही देगा देवताओं को कि बड़ी भूल में थे। देखो सिसीफसने पत्थर पहुँचा ही दिया। फिर खांचता है महीनों का श्रम, अथक किसी तरह टूटता है मरता उपर शिखरपे पहुँचता है। पहुँच न पाता कि पत्थर हाथ से छूट जाता है। फिर खाई में गिर जाता है। फिर सिसीफस उतर आता है।

आप कहेंगे कि बडा पागल है। खाई में क्यों नहीं बैठ जाता ? अगर इतना आपका पता चल गया तो आप की जिन्दगी में धर्म की शुरूआत हो जायेगी। क्योंकि हम सब सिसीफस हैं। कहना अलग अलग होगा पहाड अलग अलग होंगे, पत्थर अलग अलग होंगे। लेकिन सिसीफस हम सब। हम कोई काम बारबार किये चले जाते हैं बारबार शिखर से छूटता है पत्थर और खाई में गिर जाता है। लेकिन बडा मजेदार है आदमी का मन। वह बारबार अपनेको समजा लेता है कि कुछ भूलचुक हो गई है इसबार मालूम होता है अगली बार सब ठीक कर लेंगे। फिर शुरु कर देता है। और ऐसी भूलचुक अगर एकाद जन्म में होती हो तो भी ठीक है। जो जानते हैं वे कहेंगे अनन्त जन्मों में ऐसा ही, ऐसा ही होता रहा भौतिक सुख की चाह। आध्यात्मिक चाह, आध्यात्मिक खोजका अनिवार्य हिस्सा है। क्योंकि उसकी विफलता उसकी पूण विफलता आध्यात्मिक आनन्द खोजका पहला चरण है। इसलिये जो भौतिक सुख खोज रहा है उसको मैं आध्यात्मिक नहीं कहता। वह धर्म के ही गलत दिशा में खोज रहा है। वह आनन्द को ही वहाँ खोज रहा है जहाँ आनन्द नहीं मिल सकता है लेकिन अितना तो

पता चले पहले कि नहां मिल सकता है तो किसी और दिशामें खोजें।

लाओत्से से किसीने पूछा तुम कहते हो शास्त्रोंसे कुछ भी नहीं मिला लेकिन हमने सुना है कि तुमने शास्त्र पढ़े। तो लाआत्से ने कहा नहीं शास्त्रोंसे बहुत कुछ मिला। सबसे बड़ी बात तो यह मिली शास्त्र पढके कि, शास्त्रोंसे कुछ भी नहीं मिल सकता है। यह कोई कम मिलना है ? नहीं कुछ मिल सकता है। लेकिन बिना पढे यह पता नहीं चल सकता था। पढना बहुत खोजा बहुत नहीं मिल सकता यह जाना ही कोई कम दाम नहीं है। नेगेटीव्ह हैं असिलिए हमें ख्यालमें नहीं आता। लेकिन एक बार यह ख्यालमें आ जाय कि शब्द से, शास्त्रसे नहीं मिल सकता है तो शायद हम स्वमें जीवनमें खोजने निकले। सुख में नहीं मिल सकता है तो फिर शायद हम शांतिमें खोजने निकले। बाहर नहीं मिल सकता है। सुख तो शायद हम भीतर खोजने निकलें। पदार्थमें नहीं मिल सकता है सुख तो शायद हम परमात्मामें खोजने निकले। लेकिन वह जो दूसरी खोज है इस पहली खोजकी विफलतासे ही शुरू होती है। तो अर्जुन अभी जो बात कर रहा है वह तो भौतिक सुखकी कर रहा है कि राज्यसे क्या मिलेगा ? प्रियजन नहीं रहेंगे तो क्या मिलेगा ? सुख से क्या मिलेगा। लेकिन आध्यात्मिक खोजका पहला चरण उठाया जा रहा हैं असिलिए मैं उसे धार्मिक व्यक्ति ही कहूँगा। धर्मको उपलब्ध हो गया है ऐसा नहीं। धर्मको उपलब्ध होने के लिए जो आतुर है ऐसा।

प्रश्न : आज सुबह स्वामी श्री मनुवर्यजी के साथ जो बहस हुआ आपने बताया कि भगवद् गीता मानवशास्त्रोंके और आधुनिक मानवशास्त्रोंके करीब आ जाता है। तो क्या आप माईन्डका अथ सीमित करते हो ?

उत्तर : मैं गीताको मनोविज्ञान ही कहूंगा और मनसे मेरा

अर्थ आत्मा नहीं है । मन से मेरा अर्थ, मतलब मन ही । अन्दर ही कईको दिक्कत हो कठिनाई हो वे तो कहेंगे कि यह ता मैं गीताको नीचे गिरा रहा हूं । अध्यात्मशास्त्र कहना चाहिये । लेकिन आपसे कहना चाहूंगा कि अध्यात्मका कोई शास्त्र नहीं होता ज्यादासे ज्यादा शास्त्र मनका हो सकता है । हाँ मनका शास्त्र वहाँ तक पहुंचा दे जहां से अध्यात्म शुरू होता है अितना ही हो सकता है । अध्यात्मशास्त्र होता ही नहीं । अध्यात्म जीवन होता है; शास्त्र नहीं । अधिक से अधिक जो शब्द कर सकता है वह यह कि वह मनकी आखीरी उचाइयों और गहराइयोंको छूनेमें समर्थ बना दे । मैं गीताको अध्यात्मशास्त्र कह कर व्यर्थ न करूंगा । वैसा कोई शास्त्र होता नहीं और जो शास्त्र आध्यात्मिक होनेका दावा करते है । शास्त्र तो क्या करतें हैं ? शास्त्रको मानने वाले दावा करते हैं । वे अपने शास्त्रको व्यर्थ ही मनुष्यकी सारी उपयोगिता के बाहर कर देते हैं । अध्यात्म है अनुभव और जो अनिर्वचनीय है जो अवर्णनीय है और जो व्याख्याके पार है और जो शब्दोंसे अतीत है और शास्त्र ही जिसे चिल्ला चिल्लाके कहते हैं कि मनसे नहीं मिलेगा मनके आगे मिलेगा । और जो मनके आगे मिलेगा वह शब्दोंमें नहीं लिखा जा सकता है । इसलिए शास्त्र की आखिर से आखिर पहुंच मनस है । मन है उतना पहुंचा दे ता परम शास्त्र है और उसके पार जो छलांग लगेगी वहाँ अध्यात्म शुरू होगा ।

गीता को मैं मनसशास्त्र कहता हूं । क्योंकि गीता वहां तक पहुंचाने का सूत्र है उसमें जहांसे छलांग लग सकती है लेकिन अध्यात्मशास्त्र कोई शास्त्र होता नहीं । आध्यात्मिक वक्तव्य हो सकते हैं जैसे उपनिषद । उपनिषद आध्यात्मिक वक्तव्य हैं । लेकिन उनमें कोई विज्ञान नहीं है । इसलिए मनुष्यको बहुत काम के नहीं है । गीता बहुत काम की है । वक्तव्य है कि ब्रह्म है, ठीक है । हमें पता नहीं जो जानता है वह कहता है ! जो नहीं जानता है वह कहेगा

कि होगा । तो उपनिषद काम में आ सकता है जब आपको अध्यात्मका अनुभव हो जाय तब आप उपनिषद में पढ के कह सकते हैं कि ठीक है ऐसा मैंने भी जाना है । तो उपनिषद जो है गवाही बन सकता है । लेकिन जब आप जान लेते हैं तब मजा यह है कि जब आप जान लें तो उपनिषद की गवाही की कोई जरूरत ही नहीं । आप ही जानते हैं तो आप कहते हैं वही उपनिषद हो जाता है । तो उपनिषद जो है वह ज्यादासे ज्यादा गवाही बन सकता है । सिद्ध के लिए और सिद्धिके लिए कोई गवाही जरूरत नहीं । गीता साधक के लिए उपयोगी हो सकती है । सिद्धके किसी काम की गीता नहीं । लेकिन असली सवाल तो साधकके लिए । और सात्र का असली सवाल आध्यात्मिक नहीं है । अर्जुन का असली सवाल आध्यात्मिक नहीं है । अर्जुन का असली सवाल मानसिक है । उसकी समस्या ही मानसिक है । इसलिए अगर कोई यह कहे कि उसकी समस्या तो मानसिक है और प्रश्न उसका आध्यात्मिक हल कर रहे तो उन दोनोंके बीच फिर कोई Communication नहीं है । हो सकता, जहां समस्या है नहीं समाधान तो होना चाहिये । तभी सार्थक होगा । अर्जुन की समस्या मानसिक है । उसकी समस्या आध्यत्मिक नहीं है । उसका उलझाव मानसिक है ।

यह बडे मजे की बात है कि आध्यात्मिक समस्या होती ही नहीं है । जहां अध्यात्म है वहां समस्या नहीं जहांतक समस्या है वहांतक अध्यात्म नहीं । मामला ठीक ऐसा ही है जैसे कि मेरे घरमें अन्धेरा है और मैं आपसे कहूँ कि मेरे घरमें अंधेरा है ! आप कहेंगे कि मैं दिया ले जाकर देखता हूँ । कहाँ है ? आप दिया ले आये और अंधेरे को मैं न बता पाऊ और आप कहे बताओ कहां है, अब मैं दिया ले आया । अंधेरा कहां है ? अब मैं मुश्किलमें पड़ जाऊगा मैं आप से कहूंगा कि कृपा करके दिया बाहर रखके आइये । आप कहें कि दिया बाहर रख

आऊँगा तो अंधेरे का देखूंगा कैसे ? क्योंक रोशनी चाहिअे देखने के लिए तो फिर एक चीज़ आपसे कहूंगा कि तो फिर अंधेरा नहा देखा जा सकता। क्योंकि जहां रोशनी है वहां अंधेरा नहीं है और जहां अंधेरा है वहां रोशनी नहीं है। और इन दोनोंके बीच कोई Communicaiton नहीं हैं।

आध्यात्मिक समस्या जैसी कोई समस्या होती ही नहीं है। सब समस्यायें मानसिक हैं। अध्यात्म समस्या नहीं समाधान है। जहां अध्यात्म हैं वहां कोई समस्या नहीं। जहां कोई समस्या नहीं है वहां किसी समाधान की क्या जरूरत ? अध्यात्म स्वयं समाधान है इसलिए अध्यात्म के द्वारका नाम रखा है समाधि। समाधिका मतलब है यहांसे समाधान शुरू होता है यहांसे अब समस्यायें नहीं होंगी। समाधि का मतलब है कि यहां से अब समाधान शुरू होगा अब समस्या नहीं अब आगे प्रश्न नहीं होंगे। अब आगे प्रश्न का कोई उपाय नहीं। दरवाजे का नाम समाधि रखा है। इसका मतलब यह कि अब दरवाजे पर आ गये। अब इसके आगे समाधान का जगना है वहां समाधान ही समाधान होंगे। वहां अब कोई समस्या नहीं होगी। लेकिन समाधि के द्वार तक बड़ी समस्याएँ होंगी और वे सब समस्याएं मानसिक हैं अगर ठीक से समझें। तो मतलब है कि The mind is problem मन ही समस्या हैं।

जिस दिन मन नहीं है उस दिन कोई समस्या नहीं हैं और अध्यात्मका मतलब वह अनुभव जहां मन नहीं हैं। इसलिए जब मैं गीता को मनसशास्त्र कहता हूँ तो अधिकतम जो शास्त्र के सम्बन्धमें कहा जा सकता है अध्यात्म, वह मैं कह रहा हूँ। उससे आगे कहा नहा जा सकता। और जो लोग उसे आध्यात्मिक बनायें वह मिटवा देंगे। उसे फिकवा देंगे। क्योंकि आध्यात्मिक की कोई समस्या नहीं हैं सब समस्या मनकी है। और जब मैं कहता हूं कृष्ण को मैं कहता हूं मनोविज्ञान का पहला उद्घोषक है तो अधिकतम जो कहा जा सकता है वह मैं कहता हूं।

प्रश्न : आत्मसंश्लेषण भी कह सकते हैं ?

उत्तर : हां मनोसंश्लेषण, आत्मा का कोई संश्लेषण नहीं होता। सारा खेल मन का है। सारा उपद्रव मन का है। मनके पार न कोई उपद्रव है न कोई समस्या है। असलिए मन के पार न कोई शास्त्र है। सब गुरु शिष्य मनतक हैं। मनके पार कोई गुरु शिष्य नहीं है। मन के पार न अर्जुन, न कृष्ण है। मन के पार जो है उसका कोई नाम नहीं हैं। मन के भीतर सारी बात है। और इसलिए गीता बहुत विशिष्ट है। आध्यात्मिक वक्तव्य बहुत हैं, कीमती है लेकिन वक्तव्य हैं। अेक आदमी कहता है ऐसा है लेकिन इससे कोई हल नहीं होता। हमारी समस्यायें किसी और तलपर हैं। हमारी मुसीबतें किसी और तलपर है उस तलपर ही बात होनी चाहिअे। कृष्ण ने ठीक उस तलसे बात की है जहाँ अर्जुन है। अगर कृष्ण अपने तलसे बात करें तो गीता अध्यात्मशास्त्र होती। लेकिन तब अर्जुन को नहीं समझाया जा सकता था। अर्जुन कहता हैं माफ करें होगा मेरा कोई सम्बन्ध नहीं हैं इससे। तब उन दोनों के बीच कोई संवाद नहीं हो सकता था। तब एक आदमी आकाश और एक आदमी पातालमें होता। अर्जुन के सिर परसे बातें निकल जातीं। कुछ पकड़ में अर्जुन को नहीं आनेवाला था। लेकिन कृष्ण ठीक अर्जुन जहां है वहांसे उसका हाथ पकड़ते हैं और वहींसे सारी समस्याओंको सुलझाना शुरू करते हैं। इसलिए गीता एक साइकिल, एक मनस की गतिमान व्यवस्था है। एक एक कदम अर्जुन उपर उठता है तो गीता उपर उठती है। अर्जुन नीचे गिरता है तो गीता नीचे गिरती है। अर्जुन जमीन पर गिर जाता है तो कृष्ण नीचे झुकते हैं। अर्जुन खड़ा हो जाता है तो कृष्ण खड़े हो जाते हैं। पूरे समय अर्जुन केन्द्र पर है कृष्ण नहीं है केन्द्र पर। उपनिषद्का ऋषि केन्द्रपर वह अपने वक्तव्यको दे रहा है। वह कह रहा है कि जो मैंने जाना है वह मैं कहता हूँ उसका

आपस कोई सम्बन्ध नहीं। इसलिए गीता को एक शिक्षकके द्वारा कही हुई बातें कह रहा हूँ। कृष्ण सिर्फ ब्रह्मज्ञानी की तरह बोले तो अर्जुन स कोई नाता नहीं रह जायेगा। वे बहुत नीचे झुकके अर्जुनके साथ खड़े होके बोलते हैं। और धीरे धीरे जैसे अर्जुन उपर उठता है वैसे वे उपर उठते हैं और वहां छोड़ते हैं। गीता के आखिरी सूत्रोंको जहांसें मनस समाप्त हा जाता है और अध्यात्म शुरु होता है। उसके बाद चर्चा बंध हो जाती है उसके बाद चर्चा का कोई मतलब नहीं है। इसलिए मैंने बहुत जानकर Consilesed मेरा जो वक्तव्य था बहुत जानकर कहा है कि गीता एक psychology है। और भविष्य सिर्फ उन्हीं ग्रन्थों का है जो psychology है। भविष्य सिर्फ उन्हीं ग्रन्थो का है जो Metahaphysic है Metaphysics मर गयी। अब उसकी कोई जगह नहीं है।

अब आदमी कहता है हमारी समस्यायें हैं उन्हें हल करिये और जो उन्हें हल करेगा उसकी जगह होगी। अब फ्रायड़ जुंग, एडलर और फ्रोम और सेलिवान उनकी दुनिया है अब ये कपिल कणाद् की दुनिया नहीं है। और आनेवाले भविष्यमें कृष्ण अगर फ्रायड़ और जुंग और एड़लर की पंक्तिमें खड़े होने का साहस दिखलाते है कि गीता का भविष्य है, अन्यथा कोई भविष्य नहीं हैं। तो मैंने बहुत सोचकर कहा है, बहुत जानकर कहा है।

बाइबल का मैं नहीं कह सकता कि वह मनसशास्त्र है। कुछ वक्तव्य है जो मानसिक हैं लेकिन बहुत गहरेमें वह अध्यात्म है। अध्यात्मका मतलब जो जाना है जीससने वह वक्तव्य कह रहे हैं, बड़ी तकलीफ हुयी है क्योंकि जीसस आकाशकी बातें कर रहे हैं सुनने वाले जमीनकी बातें समझ रहे हैं। इसलिए सूली पर लटकाये गये हैं। शूली पे लटकाने का कारण हैं। बहुत सा कारण जीसस के उपर है। जीसस कह रहे हैं कि Kingdom of god में तुम्हें परमात्मा के राज्यका मालिक बना दूँगा। लोग समझ रहे

हैं कि वे जमीन के राज्यके मालिक बनाने वाले हैं। यहुदियों ने रिपार्ट कर दी उनकी कि ये आदमी खतरनाक है। Rebitions है। यह कुछ राज्य हडप की कोशिश कर रहा है और जब उनसे पूछा पायलटने कि क्या तुम राज्य हडपने की कोशिश कर रहे हो? उन्होंने कहा कि हम राज्य पर हमला बोल रहे हैं। मगर वह दूसरे राज्य की बात कर रहा है। Kingdom of god वह कहीं राज्य किसीको पता नहीं है। उन्होंने कहा यह आदमी खतरनाक है। इस आदमी को शूलीपर लटकाना चाहिअे।

जीसस जहाँ से बोल रहे हैं वहाँ सुननेवाले लोग नहीं हैं। और जहाँ जीसस बोल रहे हैं वहाँ अुनको सूननेवाला एक भी आदमी नहीं हैं। इसलिए जीसस और उनके सूननेवाले में कोई ताल-मेल नहीं है। कृष्ण अद्भुत शिक्षक हैं। वे अर्जुन को प्राइमरी क्लास से लेके ठीक युनिवर्सिटी के आखिरी दरवाजे तक पहुँचाते हैं। बहुत लम्बी यात्रा है। बहुत लम्बी यात्रा है और बड़ी सूक्ष्म यात्रा है। अब मैं वैसा ही चाहूँगा कि हम वैसे ही यात्रा करें।

प्रश्न : आचार्यजी आपने बताया कि मनुष्य जन्मजन्म का पुनरावर्तत करता रहता है। तो क्या पूर्वजन्म पाने के लिए वह पुनरावर्तन जरूरी नहीं है? यदि न हो तो उसमें से अतिक्रमण कब होता ? और उसमें क्या कर सकता ?

उत्तर : जीवन का अनन्त पुनरावर्तन है, उपयोगिता है उसकी। उससे प्रौढ़ता आती है। खतरा भी है उसका। उससे जड़ता भी आ सकती है। एक ही चीज से दुबारा गुजरनेसे दो सम्भावनाएं हैं। या तो दुबारा गुजरने से आप उस चीजको ज्यादा जान लेंगे। और यह भी सम्भावना है कि दुबारा गुजरते वक्त आप उतना भी न जान पायेंगे जितना आपने पहली बार जाना था।

आपके घर के सामने जो वृक्ष लगा हो आप उसको शायद ही देखते हों। क्योंकि इतनी बार देखा है कि देखने की कोई जरूरत नहीं रह गयी। पति-पत्नी तो शायद ही एक दूसरे को देखते हों। तीस तीस साल साथ रहते हो गये। देख लिया था बहुत पहले जब शादी हुअी थी। फिर देखने का कोई मौका नहीं आया। असलमें देखने की कोई जरूरत नहीं रही। अपरिचित स्त्री सड़कें से निकलती हैं तो दिखाई पड़ती है। असल में अपरिचित दिखाई पड़ता है। परिचित के प्रति हम अंधे हो जाते हैं। Blind despot हो जाते हैं। उसे देखने की कोई जरूरत नहीं होती।

कभी आँख बन्द करके सोचे कि आपके माँ का चेहरा कैसा है। तो आप बड़ा मुश्किलमें पड़ जायेंगे। Film actress का चेहरा याद आ सकता हैं। माँ का चेहरा आँख बन्द करके देखेंगे तो एकदम खोने लगेगा। थोड़ी देर रुपरेखा गड़बड़ हो जायेगी कि माँ का चेहरा पकड़ में नहीं आता इतना देखा हैं, इतना पास से देखा है कि कभी गौर से नहीं देखा। निकटता अपरिचय बन जाती है। निकटता अपरिचय बन जाती है तो अनन्त जीवनमें एक से ही अनुभव से बार-बार गुजरने पर दो सम्भावनायें हैं और चुनाव आप पर है कि आप क्या करेंगे? स्वतंत्रता आप की है। आप यह भी कर सकते हैं कि आप बिलकुल जड़ Mechanism हो जायें। जैसा कि हम अधिक लोग हो गये हैं। एक यंत्रवत् घूसते रहे बस वही रोजरोज करते रहे। कल भी क्रोध किया था परसों भी क्रोध किया था, उसके पहले भी, पिछले वर्ष भी उसके पहले वर्ष भी। इस जन्म का ही हिसाब रखे तो भी काफी है। अगर पचास साल जियें है तो कितनी बार क्रोध किया है और हर बार क्रोध करके कितनी बार पश्चात्ताप किया है। और हर बार पश्चात्ताप करके फिर दुबारे क्रोध किया है। फिर दुबारा पश्चात्ताप किया है। फिर धीरे धीरे

एक रुटीन, एक व्यवस्था बन गयी है। और आदमी को देखकर आप कह सकतें कि ये अभी क्रोध कर रहा है। थोड़ी देर बाद पश्चात्ताप करेगा। क्रोध में क्या कह रहा है यह भी बता सकते हैं क्या कहेगा यह भी बता सकते हैं। अगर दो चार दफे उसको क्रोध करते देखा हैं और बाद में भी प्रेरित कर सकते हैं कि क्रोध के बाद पश्चात्ताप में ये ये बातें वह कहेगा। कसम खायेगा कि अब क्रोध कभी नहीं करूँगा। हालांकि ये कसमें इसने पहले भी खाईं हैं। इसका कोई मतलब नहीं है। यह जड़ व्यवस्था हो गयी है। लेकिन अगर कोई आदमी होशपूर्वक क्रोध किया है तो हर बार क्रोध का अनुभव उसे क्रोध से मुक्त कराने में सहयोगी होगा। और अगर बेहोशी से क्रोध किया है तो हर क्रोध का अनुभव उसे और भी क्रोध की जड़-मूर्च्छा में ले जाने में सहयोगी होता है।

जीवन का पुनरावर्तन दोनों सम्भवानायें खोलता है। हम कैसा उपयोग करेंगे, हम पर निर्भर हैं। जीवन सिर्फ सम्भावनायें देता है। हम उन सम्भावनाको क्या रुपान्तर देंगे यह हम पर निर्भर है। एक आदमी चाहे तो क्रोध करके और गहरे क्रोध का अभ्यासी बन सकता हैं। और एक आदमी चाहे तो क्रोध करके क्रोध की मूर्खता को देखकर, व्यर्थता को देखकर, क्रोध की अग्नि और विक्षिपता को देखकर क्रोधसे मुक्त हो सकता है। जो आदमी जड़ होता चला जाता हैं वह आदमी अधार्मिक होता चला जाता है। वह और संसारी होता चला जाता है। जो आदमी चेतन होता चला जाता है वह धार्मिक होता चला जाता है। उसके जीवन में एक क्रान्ति होती चली जाती है।

प्रत्येक पर निर्भर है कि जीवनका आप क्या करेंगे? जीवन निर्भर नहीं है। जीवन अवसर है उसमें क्या करेंगे यह आप पर निर्भर है। यह निर्भरता ही आपको आत्मवान होने के प्रमाण है।

यह निर्भरता ही आपको आत्मा होने का गौरव है। आपके पास आत्मा है अर्थात् चुनाव की शक्ति है। क्या आप चुनें क्या करें? और मजे कि बात यह है कि आपने हजारों चक्कर लगाये हों अगर आज भी आप निर्णय करें तो सारे चक्कर इसी क्षण छोड़ सकते हैं तोड सकते हैं। लेकिन मन least Resistance की तरफ बहता है।

घर में मैं एक लोटा पानी गिरा दूं, फर्श से बह जाये सूख जाये, पानी उड जाये, लेकिन एक सुखी रेखा फर्श पे छुट जाती है। पानी नहीं है जरा भी। कुछ भी नहीं है। सिर्फ एक सूखी रेखा है। और सुखी रेखा का मतलब क्या है? कुछ भी मतलब नहीं है। वहाँ पानी बहा था। बस इतनी एक रेखा छुट जाये। फिर दुबारा पानी उस कमरे में डाल दें। सौमें निन्यानवें मौके ये हैं कि वह उसी सूखी रेखा को पकड के फिर बहेगा। क्यों कि least resistanees है। उस सूखी रेखा पर धूल कम हैं। कमरे के दूसरे हिस्सों में धूल ज्यादा है वहाँ जगह जरा आसानी से बहने की है। हाँ, पानी वहींसे बहेगा। हम बहुत बार जो किये हैं वहाँ वहाँ सूखी रेखायें बन गयी हैं। उन सूखी रेखाओं को ही मनसशास्त्र संस्कार कहता है। वह हमारी Conditionings हैं। उन सूखी रेखाओं पर फिर वही काम, फिर शक्ति का जन्म, फिर पानी का बहना least resistance है। फिर हम वहीं से बहना शुरु कर देंगे। लेकिन सूखी रेखा कहती नहीं कि यहाँ से बहो। सूखी रेखा बांधती नहीं कि यहां से नहीं बहे तो अदालतमें मुकदमा चलेगा। सूखी रेखा कहती नहीं कि कोई नियम हैं ऐसा कि यहीं से बहना पडेगा कि परमात्माकी, परमात्माकी आज्ञा है कि यहीं से बहो। सूखी रेखा सिर्फ एक खुला अवसर है। चुनाव सदा आपका है। और पानी अगर तय करे कि नहीं बहना है सूखी रेखासे तो नयी रेखा बना लेगा। और बह जाये। फिर नयीं सूखी रेखा बन जायेगी, फिर नया संस्कार बन जायेगा।

धर्म निर्णय आर संकल्प है। जो होता रहा है उससे अन्यथा होने की चेष्टा, जो कल तक हुआ है, उसकी समझसे वैसा दुबारा न हो इसका संकल्पपूर्वक चुनाव है। इसे ही हम साधना कहें योग कहें, जो भी नाम देना चाहें दे सकते हैं।

प्रश्न : अर्जुन तीन लोकका राज्य मिलने पर भी युद्धको त्याज्य ही मानता है। वह यही बात बारबार दोहराता है। असल बात क्या है उसके त्यागकी ?

उत्तर : बार बार, फिर फिर, अर्जुन जो कह रहा हैं वह बहुत विचारयोग्य है। दो तीन बातें ख्याल में ले लेनी जरुरी है। वह कह रहा है कि अपने स्वजनों को मार कर अगर तीनों लोगों का राज्य भी मिलता हो तो भी मैं लेने को तैयार नहीं हूं इसलिए इस पृथ्वी के राज्य की तो बात ही क्या? देखने में ऐसा लगेगा बड़े त्याग की बात कह रहा है; ऐसा है नहीं।

मैं एक वृद्ध सन्यासी से मिलने गया। उन वृद्ध सन्यासीने मुझे एक गीत पढके सुनाया। उनका लिखा हुआ गीत था। उस गीतमें उन्होंने कहा कि सम्राट हो तुम अपने स्वर्णसिंहासन पर आगे हो सुख में। मैं अपनी धुल में ही मजे में हूँ। मैं लात मारता हूं तुम्हारे स्वर्णसिंहासनो को। तुम्हारे स्वर्ण सिहासनों में कुछ भी नहीं रखा है। मैं अपनी धूल में ही मजे में हूं। ऐसा ही गीत था। पूरे गीत में यही बात थी। सुनने वाले बड़े मंत्रमुग्ध हो गये। हमारे मुल्क में मंत्रमुग्ध होना इतना आसान है कि और कोई चीज आसान नहीं। सिर हिलाने लगे। मैं बहुत हैरान हुआ। उनका सिर हिलता देखकर सन्यासी भी बहुत प्रसन्न हुओ। उन्होंने मुझसे पूछा आप क्या कहते हैं? मैंने कहा मुझे मुश्किल में डाला दिया। आप मुझसे पूछिये मत। उन्होंने कहा नहीं कुछ तो कहिये। मैंने कहा

मैं सदा सोचता हूँ कि अब तक किसी सम्राट ने ऐसा नहीं कहा कि सन्यासीओ ! अपनी धूल में रहो मजे में, हम तुम्हारी धूल को लात मारते हैं। हम अपने सिंहासन पर ही मजे में हैं। किसी सम्राटने अबतक ऐसा गीत नहीं लिखा। सन्यासी जरूर सैंकड़ा वर्षोंसे ऐसे गीत लिखते रहे हैं। कारण खोजना पड़ेगा। असलमें सन्यासी के मन में सुख तो सोने के सिंहासन में ही दिखाई पडता है। अपने को समझा रहा है। Consolatory है उसकी बात। वह कह रहा है रहे आओ अपने सिंहासनपर। हम अपनी धूल में ही बहुत मजेमें हैं। लेकिन तुमसे कह कौन रहा है कि तुम सिंहासन पर रहो ! तुम धूल में मजे में हो तो मजे में रहो। सिंहासन वाले को ईर्ष्या करने दो तुम्हारे मजे की। लेकिन सिंहासनवाला कभी गीत नहां लिखता कि तुम अपने मजे में रहो तो रहे जाओ। असको Consolation की कोई जरुरत नहीं है। वह अपने सिहासन पर तुम्हारी धूलसे कोई ईर्ष्या नहीं कर रहा है। लेकिन तुम धूलमें पडे हुअे उसके सिंहासन से जरुर ईर्ष्यारत हो। ईर्ष्या गहरी है।

अब अर्जुन अपने को समझा रहा हैं। मन तो उसका होता है कि राज्य मिल जाये लेकिन वह तो यह कह रहा है कि इन सबको मारकर अगर तीनों लोकों का राज्य भी मिलता हो, हाँ ताकि कहा कोई मिल नहीं रहा है। कोई देनेवाला नहीं है तीनों लोक का राज्य भी मिलता हो तो भी बेकार हैं। एसे बड़े राज्य की बात कर के फिर वह उसका दूसरा निष्कर्ष निकालता है ? कि तब फिर पृथ्वी के राज्य का तो प्रयोजन ही क्या है ? ऐसा बडा ख्याल मनमें पैदा करके कि मैं तीनों लोक का राज्य भी छोड सकता हूं। तो फिर पृथ्वी का राज्य ता छोड ही सकता हूं। लेकिन न तो सको पृथ्वी का राज्य छोड़ने की इच्छा है, और अगर कृष्ण

कहीं उससे कहे कि देख तुझे तीनों लोक का राज्य दिये दे रहे हैं तो वह बडी उलझनमें पड़ जाये। वह कह रहा है अपने को समझा रहा है। अब यह बडे मजे की बात है कि बहुत बार जब हम अपनेको समझाते होते हैं तो हमारे ख्यालमें नहीं होता कि हम किन-किन तरकीबों से अपने को समझाते हैं। बडा मकान देखके हम कहते हैं क्या रखा है बड़े मकानमें, लेकिन जब कोई आदमी कहता है कया रखा है बडे मकान में तो उस आदमी को बहुत कुछ रखा है, निश्चित ही रखा है। अन्यथा बड़ा मकान दिखता नहीं। वह अपने मन को सान्त्वना दे रहा है कि कुछ रखा ही नहीं है इसलिए हम पाने की कोशिश नहीं करते। अगर कुछ होता तो हम तत्काल पा लेते लेकिन कुछ है ही नहीं। इसलिए हम पाने की कोई कोशिश नहीं करते। यह अर्जुन कह रहा है कि तीन लोक के राज्यमें भी क्या रखा है। इसलिए पृथ्वीके राज्य में तो कुछ भी नहीं रखा। और इतने छोटे से राज्य को पानेके लिए इतने प्रियजनों का मारना। अिन प्रियजनों को मारना उसके लिए सर्वाधिक कष्टपूर्ण है न मारना कष्टपूर्ण मालूम पडता है। प्रियजनों को मारना कष्टपूर्ण मालूम पड़ रहा है। स्वभावतः सारा परिवार वहां लडने के लिए खडा है।

ऐसे युद्ध के मौके कम आते हैं। वह युद्ध भी विशेष है। और युद्धकी तीक्ष्णता यही है महाभारतकी कि एक ही परिवार हैं। कटके खडा है। उस कटावमें भी सब दुश्मन नहीं हैं। कहना चाहिअे जो फर्क है, यह थोड़ा सोचने जैसा है। जो फर्क है वह दुश्मन और मित्र का कम है। जो फर्क है वह कम मित्र और ज्यादा मित्र का है। जो बँटवारा है वह बंटवारा ऐसा नहीं है कि उस तरफ दुश्मन हैं और इस तरफ मित्र हैं। इतना भी साफ होता कि उस तरफ पराये हैं और इस तरफ अपने हैं तो कटाव बहुत आसानी से हो जाता। अर्जुन ठीकसे

मार पाता। लेकिन बँटवारा बहुत अजीब है। और वह अजीब बड़ा अर्थपूर्ण है वह अजीब बँटवारा ऐसा है कि अिस तरफ अपने थोडे जो ज्यादा मित्र थे वे इकट्ठे हो गये हैं। जो थोडे कम मित्र थे वे उस तरफ़ इकट्ठे हो गये हैं। मित्र वे भी हैं, प्रियजन वे भी हैं। गुरु उस तरफ़ है। यह मैं कह रहा हूं महत्वपूर्ण है।

और ऐसी Situation है असिलिए महत्त्वपूर्ण है कि जिन्दगी में चीजे Watertight Compartment में बँटी हुई नहीं होती। जिन्दगी में चीजें काले सफेद में बंटी हुअी नहीं होती। जिन्दगी गिरोह का फैलाव है। उसके एक कोने पे काला होता है दूसरे कोने पे सफेद। लेकिन जिन्दगी के बडे फैलाव में काला और सफेद मिश्रित होता है। यहां फला आदमी शत्रु और फला आदमी मित्र ऐसा बँटाव नहीं है। फला आदमी कम मित्र, फला आदमी ज्यादा शत्रु, ऐसा बँटाव है। यहां जिन्दगी में Adsolute terms नहीं है। यहां कोई चीज पूरी कही हुअी नहीं है। यही उलझाव है। यहाँ सब चीजे कम ज्यादा में बंटी हैं।

हम कहते हैं यह गरम है और यह ठंड़ा है। लेकिन ठंडेका क्या मतलब होता है? थोड़ा कम गर्म। गर्म का क्या मतलब है? थोड़ा कम ठंड़ा। कभी ऐसा करे कि एक हाथ को स्टोंव पर जरा गरम कर लें और एक हाथ को बर्फ पे रख के जरा ठंड़ा कर लें और फिर दोनों हाथ को एक ही बाल्टी के पानीमें ड़ाल दें। तब आप बड़ी मुश्किल में पड़ जायेंगे तब ठीक अर्जुन की हालत में पड़ जायेंगे। तब आपका एक हाथ कहेगा कि पानी ठंड़ा और एक हाथ कहेगा पानी गरम। और एक पानी दोनों तो नहीं हो सकते एक साथ ठंड़ा और गरम।

जीवनमें सब कुछ सापेक्ष है Relative है। जिन्दगी में कुछ भी निरपेक्ष नहीं है यहाँ सब कम ज्यादा का

बँटाव है। अर्जुन की वही तकलीफ है। और जो आदमी भी जिन्दगी को देखेगा ठीक से, उसकी यही तकलीफ हो जायेगी। यहां सब कम ज्यादा का बँटाव है। कोई थोड़ा अपना ज्यादा, कोई अपना कम। कोई थोड़ा ज्यादा निकट, कोई थोड़ा जरा दूर। कोई सौ प्रतिशत कोअी नव्वे प्रतिशत कोई अस्सी प्रतिशत अपना। कोई नव्वे प्रतिशत, अस्सी प्रतिशत, कोई सत्तर प्रतिशत पराया। लेकिन जो पराया है उसमें भी अपना एक प्रतिशत का हिस्सा है। और जो अपना है उसमें भी पराये प्रतिशत का हिस्सा है। इसलिए जिन्दगी उलझाव है। जो कट ठीक ही शत्रु मित्रों अच्छे बूरेमें तो बड़ा आसान हो पाता।

राम के भीतर भी थोड़ा रावण है और रावणके भीतर भी थोड़ा राम है। इसलिए तो रावण को भी कोई प्रेम कर पाता, नहीं तो रावण को कोई प्रेम न कर पाये। रावण को कोई प्रेम कर पाता है रावण में भी कहीं न कहीं राम किसी न किसी को दिखाई पडता है। रावण कोई भी को प्रेम कर पाता है राम से भी कोई शत्रुता कर पाता है तो राम की शत्रुता में भी कहीं न कहीं रावण थोड़ा दिखाई पड़ता है। यहाँ बड़े से बड़े संत में भी थोड़ा पापा है। और यहां बड़े से बड़े पापी में भी थोडा संत है।

जिन्दगी सिर्फ सापेक्ष विभाजन है। इसलिए अर्जुन की तकलीफ है कि सब अपने ही खड़े हैं। एक ही परिवार के बीच में रेखा खींच दी। उस तरफ अपने हैं, इस तरफ अपने हैं। हर हालतमें अपने ही मरेंगे। यह पीड़ा पूरे जीवन की पीड़ा है और यह स्थिति यह Situation पूरे जीवन की स्थिति है। इसलिए अर्जुन के लिए जो प्रश्न है वह सिर्फ इसी युद्धके स्थल पर पैदा हुआ प्रश्न नहीं है। वह है। उधर द्रोण खड़े हैं उन्हीं से सीखा है और उन्हीं पर तीर

थल पर पैदा हुआ प्रश्न है। अब वह घबड़ा गया

खींचना है। उन्हीं से धनुर्विद्या सीखी है। वह उनका सब से पट्ट शिष्य है। सबसे ज्यादा जीवन में उसके लिए ही द्रोण ने किया है। एकलव्यका अँगूठा काट लाये थे इसी शिष्य के लिए। वही शिष्य आज उन्हींकी हत्या करने को तैयार हो गया। इसी शिष्य को उन्होंने बडा किया है खून पसीना एक कर। सारी कला इस में ऊंडेल दी है। आज इसी के खिलाफ वह धनुष्यबाण खींचेगा! यह बड़ा अद्भुत योग है। यह एक ही परिवार जिन में बड़े तालमेल हैं बडे जोड़ हैं बड़ी निकटताएँ हैं। कहके खड़ा हो गया। लेकिन अगर हम जिन्दगी को ठीक से बहुत गहरेमें देखें तो जिन्दगी के सब युद्ध अपनों के ही युद्ध हैं। क्योंकि पृथ्वी एक परिवारसे ज्यादा नहीं है।

अगर हिन्दुस्तान पाकिस्तान से लडेगा तो एक परिवार ही लड़ेगा। कल जिन बच्चों को हमने पढाया-लिखाया बडा किया था वे वहाँ है। कल जिस जमीन को हम अपनी कहते थे वह वहाँ हैं। कल जिस ताजमहल को अपना कहते और जिसके भीतर जाते वह यहाँ है। यहाँ सब बँटा हैं। अगर हम कल चीन से लडेंगे तो हिन्दुस्तान ने चीन को सब-कुछ दिया है। और हिन्दुस्तानकी सबसे बडी धरोही होतो यह है कि बुद्धको चीनने बचाया है। और कोई बचाता नहीं!

अगर सारी पृथ्वी ठीक से देखें तो एक बड़ा परिवार है। उसमें सारे युद्ध पारिवारिक हैं। और सब युद्ध इसी स्थिति को पैदा करते थे जो अर्जुन के मनमें हो गयी थी। उसकी दुविधा एकदम स्वाभाविक है। उसकी चिन्ता एकदम स्वाभाविक। इस दुविधा से क्या निस्तार। या तो आँख बंद करें और युद्धमें कूद जायें या आँख बंद करें और भाग जायें। ये दो ही उपाय दिखाई पड़ते हैं।

तो आँख बन्द करें और कहे, होगा कोई, जो अपनी तरफ नहीं है, अपना नहीं है। मरना है मरे। आँख बन्द करें युद्ध में कूद जाय सीधा या आँख बन्द करें और भाग जाय सीधा। लेकिन कृष्ण जो उपाय सूझाते हैं। वह सीधा नहीं है वह least resistance का नहीं है। ये दोनों least Resistance के हैं। ये दोनों सूखी रेखायें हैं। इन दोनोंमें वह कही भी चला जाये। बड़ी सरल है बात। शायद अनन्त जन्मों में इन दो में से कहीं न कही वह गया होगा। यह सहज विकल्प है। लेकिन कृष्ण एक तीसरा ही विकल्प सूझाते है। जिसमें वह कभी नहीं गया हैं। वह तीसरा विकल्प ही कीमती है। और जिन्दगी में जब भी आपके सामने दो विकल्प आयें तो निर्णय करने के पहले तीसरे के सम्बन्ध में सोच लेना। क्योंकि वह तीसरा सदा ही महत्त्वपूर्ण है। वे दो हमेशा वही हैं जो आपने बारबार चुने हैं। कभी इसको, इससे थक गये तो विपरीत को; कभी विपरीतसे थक गये तो इसको उनको आप चूनते रहे हैं। The third वह तीसरा ही महत्त्वपूर्ण है जो ख्यालमें नहीं आता है। उस तीसरे को ही कृष्ण प्रस्तावित करेंगे। उसपर भी हम आगे बात करेंगे।

गीता दर्शन
पुष्प १

जीवन जागृति केन्द्र

आवरण • दीपक प्रिन्टरी • अमदावाद-१